www.thearyasamaj.org

R.N.I. No. 2321/57

रजि. सं. MTR नं. 04/2016-18

दिसम्बर 2016

अंक 11

ओ३म्

तपोभूमि

मासिक

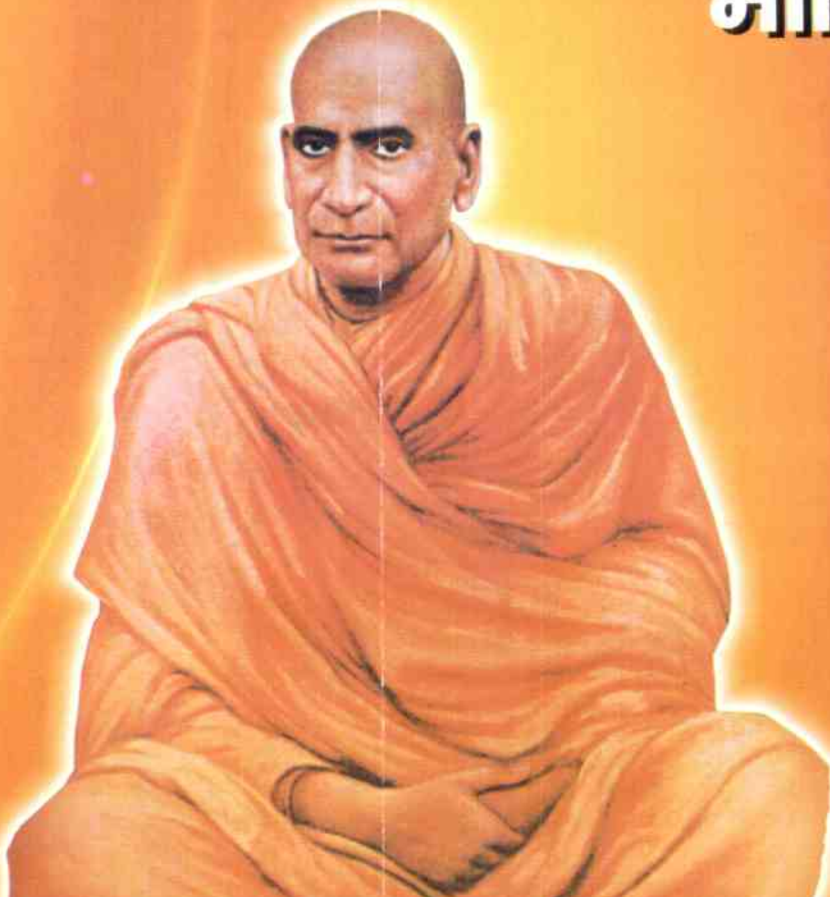

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती

(1856–1926)

23 दिसम्बर बलिदान दिवस

www.thearyasamaj.org

सम्पादकीय

मोदी की श्वेत क्रान्ति

जब कोई परिवर्तन धीरे-धीरे आता है तो उसे सुधार कहते हैं और जब कोई परिवर्तन बड़े वेग से आता है तो उसे क्रान्ति कहते हैं। विश्व में अनेक क्रान्तियाँ हुई और हो रही हैं। रशिया या चीन में क्रान्ति हुई तो लोगों ने उसे रक्तक्रान्ति कहा लालक्रान्ति कहा। हमारे देश में क्रान्ति की संज्ञा हरितक्रान्ति रखी गयी। परन्तु जो क्रान्ति मोदी ने काले धन को लेकर की है और उस काले धन को राष्ट्रहित में बाहर निकालकर श्वेत करने का उद्योग किया है उसे श्वेतक्रान्ति ही कहा जायेगा। तीन ही क्रान्तियाँ हो सकती हैं रक्तक्रान्ति हरितक्रान्ति या फिर श्वेतक्रान्ति। चौथी नहीं हो सकती है उसका कारण प्रकृति के तीन ही गुण हैं सत्व, रजस, तमस। सत्व श्वेत है, रजस लाल है, तमस हरा है कोई भी क्रान्ति इन्हीं के अन्तर्गत होगी। आप सत्व को श्वेतक्रान्ति रजस को लालक्रान्ति, तमस को हरितक्रान्ति भी कह सकते हैं। इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि क्रान्ति होना चाहिये। हमारी वैदिक संस्कृति में संसार में शान्ति के लिए श्वेतक्रान्ति की बात सर्वत्र कही है मानव की हर समस्या का समाधान श्वेतक्रान्ति है। कहते हैं कि एक बार महाराज जनक ने महर्षि याज्ञवल्क्य से राज की नाना प्रकार की समस्याओं के समाधान करने के लिए सूत्र रूप में या बीज रूप में उपाय पूछा कि महर्षे! हमें आप सारी समस्याओं का समाधान अति संक्षेप में कहें तब महर्षि याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि सभी समस्याओं का समाधान अग्निहोत्र है उनका उत्तर सुनकर महाराज जनक और उलझन में फंस गये कि सारी समस्या का समाधान अग्निहोत्र कैसे हो सकता है? राजा ने पुनः जिज्ञासा प्रकट करते हुए पूछा कि महाराज फिर बतायें कि अग्निहोत्र से आपका अभिप्राय क्या है? महर्षि पुनः बोले कि पयः एव इति। इसका अर्थ हुआ (पय) दूध (एव) ही (इति) बस! अर्थात अग्निहोत्र दूध ही है बस!

इस प्रसंग को देखकर विदित होता है कि पयः अर्थात् दूध प्रतीक है अपने श्रम से प्राप्त हुए फल का। गाय की सेवा से जो फल प्राप्त होता है उसे दूध कहते हैं। सर्वत्र ही पयः की यही परिभाषा लागू होने पर सारी समस्याओं का समाधान स्वतः हो जाय। अर्थात प्रत्येक नागरिक के अपने श्रम से पैदा किये धन को ही अपना समझना चाहिए तभी वह धन दुग्ध रूप होगा। अर्थात् दूध का श्वेत होना भी इसी बात का प्रतीक है। वही श्रम से प्राप्त धन श्वेत धन की श्रेणी में आयेगा। इससे बिना परिश्रम और व्यवस्था से कोई भी कमाई की जायेगी वह दुग्ध रूप नहीं होगी। गाय की सेवा करने से जो हमें उसके स्तनों से दूध प्राप्त होता है वही दूध प्राप्त करने का मार्ग और कोई नहीं है यही ईश्वरीय व्यवस्था है। गाय के स्तनों से अलग खून ही मिलेगा दूध नहीं। इसी प्रकार राष्ट्र भी एक गौ के समान है। राष्ट्र की सेवा से जो फल मिलेगा वह राष्ट्र के नियम पर चलकर ही मिलेगा तभी दुग्ध रूप होगा। अन्य प्रकार से लोगों को तो खून ही मिलेगा दूध नहीं। और वह रक्त के समान फल हमारे सर्वनाश का कारण होगा। राष्ट्र कमजोर हो जायेगा। महात्मा कबीर ने इसी तथ्य को इस प्रकार प्रगट किया है कि–

श्रम से मिले दूध सम समझो,
मांग मिले तो पानी।
कहें कबीर खून सम समझो,
जामें खींचातानी।।

कुछ लोग राष्ट्र की व्यवस्थाओं को तोड़कर धन अर्जित करते हैं जिसे काला धन कहते हैं वह रक्तरूप होता है। जो उस व्यक्ति के लिए जिसने उस धन गलत तरीकों से प्राप्त किया है। घातक हो जाता है साथ ही सामाजिक और राष्ट्रिय परिवेश में अव्यवस्था का कारण है। जिससे सर्वत्र चोरी, डकैती, छीना-झपटी का वातावरण बन जाता है और अशान्ति फैल जाती है। अन्याय का घोर अंधकार छा जाता है जिससे अपनी पराये की पहचान तक मानव भूल जाता है। स्वार्थी होना अन्धा होना है अपना सारा विवेक खो बैठना है। दिनकर जी ने ठीक ही लिखा है कि–

जब स्वार्थ मनुज की आँखों पर माड़ी बनकर छा जाता है।
तब वह मानव से बड़े–बड़े दुश्चिन्त्य कृत्य करवाता है।।

आज जो सर्वत्र अशान्ति दिखाई दे रही है इसका एक मात्र कारण राष्ट्र की व्यवस्थाओं को तोड़कर अर्जित किया हुआ अपार धन है जिसे हम कालाधन कहते हैं। प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी जी का कोटिशः धन्यवाद है कि उन्होंने सारी अशान्ति का जो मूल है उसी पर कुठाराघात बड़ी ही प्रबलता से किया है। इसके निश्चित ही परिणाम अत्यन्त शुभ होंगे। सारे अनर्थों की जड़ कट जायेगी ठीक ही लिखा है कि–

तब अनर्थ के बीज अर्थ बोता है।
जब एक हाथ में मुष्टि बद्ध होता है।

–शेष पृष्ठ संख्या 35 पर

www.thearyasamaj.org

तपोभूमि

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्0)
शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका
(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–62 | संवत्सर 2073 | दिसम्बर 2016 | अंक 11

संस्थापक
स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

संपादक:
आचार्य स्वदेश
मोबा. 9456811519

दिसम्बर 2016

सृष्टि संवत्
1960853117

दयानन्दाब्द: 193

प्रकाशक
सत्य प्रकाशन
आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग
मसानी चौराहा, मथुरा
(उ0 प्र0)
पिन कोड–281003

दूरभाष:
0565–2406431
मोबा. 9759804182

अनुक्रमणिका

लेख–कविता		पृष्ठ संख्या
वेदवाणी	–डॉ0 रामनाथ वेदालंकार	4
माता शेरां वाली और भगवती जागरण	–स्वामी अखण्डमण्डनानन्द	5–8
पारस्परिक सहायता	–बाबू दयाचन्द्र गोयलीय	9–12
स्वास्थ्य	–श्यामसुन्दर दास	13–16
ब्रह्मचर्य–विज्ञान	–जगननारायण देव	17–19
सच्चे सुख का साधन	–दयाचन्द्र गोयलीय	20–23
मधुमास सौरभ	–ओंकारसिंह विभाकर	24–25
सन्तान उत्पत्ति के लिये शिक्षा	–डॉ0 गोकुलचन्द नारंग	26–27
आर्यसमाज का पद्य साहित्य	–डॉ0 सूर्यदेव	28–33

❋❋❋

वार्षिक शुल्क 150/– पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 1500/– रूपये

www.thearyasamaj.org

वेदवाणी

लेखकः डॉ० रामनाथ वेदालङ्कार

अपामार्ग ओषधि का प्रभाव

क्षुधामारं तृष्णामारमगोतामनपत्यताम्।
अपामार्ग त्वया वयं सर्वं तदप मृज्महे।। अथर्व0 4.17.6

शब्दार्थ:–

(क्षुधामारम्) अतिभूख से मर जाना अथवा भूख का मर जाना, (तृष्णामारम्) अति प्यास से मर जाना अथवा प्यास का मर जाना, (अगोताम्) वाणी के पक्षाघात को अथवा ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों की अशक्ति को, (अनपत्यताम्) सन्तान के अभाव को, (सर्वं तत्) इन सब रोगों को (अपामार्ग) हे अपामार्ग ओषधि। (त्वया) तेरे द्वारा (वयम्) हम (अपमृज्महे) नष्ट कर देते हैं।

भावार्थ:–

जंगलों में ऐसी अनेक बहुमूल्य ओषधियों की बिना किसान के स्वाभाविक रूप से खेती हो रही है, जिनके गुणधर्मों का यदि किसी को परिज्ञान हो तो वह उनका व्यापार करके या भेषजालय में उनका प्रयोग करके मालामाल हो सकता है। उन्हीं में एक ओषधि अपामार्ग भी है, जिसे चिरचिटा भी कहते हैं और जिसकी टहनियों पर काँटे-काँटे से चिपके रहते हैं, जो पास से गुजरनेवालों की टाँगों पर या वस्त्रों पर चिपट जाते हैं। इस ओषधि का प्रथम गुण मन्त्र में यह बताया गया है कि यह 'क्षुधामार' है। 'क्षुधामार' शब्द के दो अर्थ होते हैं, प्रथम क्षुधा से मर जाने का रोग, जिसमें अत्यधिक भूख लगती है, उसकी तृप्ति भक्षित अन्न आदि से हो नहीं पाती, क्योंकि अन्नादि पर्याप्त नहीं होता है। यह रोग अपामार्ग के बीजों के सेवन से दूर हो सकता है। 'क्षुधामार' का दूसरा अर्थ है भूख का मर जाना, अर्थात् इस रोग के रोगी को भूख लगती ही नहीं। इसमें अपामार्ग के पत्तों का काढ़ा रोगी को अल्पमात्रा में पिलाया जाता है। मन्त्र में दूसरा रोग गिनाया है–'तृष्णामार'। इसके भी दो अर्थ होते हैं–एक इतनी प्यास लगना कि प्यास से मर जाना। प्यास को कम करने के लिए अपामार्ग की बीजों सहित टहनी को सादे पानी में भिगोकर उसका रस लेना चाहिए। 'तृष्णामार' का दूसरा अर्थ है प्यास का मर जाना अर्थात् प्यास लगना ही नहीं या बहुत कम लगना। इसमें अपामार्ग के पत्तों का रस निकाल शहद और छोटी इलायची के साथ देना चाहिए।

मन्त्र में तीसरा रोग परिगणित किया गया है 'अगोता' अर्थात् जीभ का पक्षाघात अथवा ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों की अशक्ति। इसके लिये अपामार्ग की जड़ मठे के साथ लेना उपयोगी हो सकता है। चौथा रोग है 'अनपत्यता' अर्थात् सन्तान न होना। इसका दोष स्त्री में, पुरुष में या दोनों में हो सकता

–शेष पृष्ठ संख्या 19 पर

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

माता शेरां वाली और भगवती जागरण

न सोना न सोने देना

लेखकःस्वामी अखण्डमण्डनानन्द

कुछ समय पश्चात् रुकमणी के घर एक हंसता–खेलता बालक पैदा हुआ लेकिन बालक के लाड़–प्यार में मां का जागरण करवाना भूल गई। लेकिन मां ने रुकमणी से अपना जागरण करवाने के लिये रुकमणी के लड़के को बहुत सख्त बीमार कर दिया। लड़के को बीमार देखकर फिर से, रुकमणी मां के दरबार में मिन्नते मानने लगी कि हे मां मेरा लड़का ठीक हो जाये तो मैं तेरा जागरण कराऊंगी।' (पृ0 20)

"एक रात मां ने रुकमणी को स्वप्न में दर्शन दिया और कहा कि तूने मेरा जागरण करवाने की मिन्नत मांगी थी तेरे मन की इच्छा पूरी की लेकिन तूने अपने घर जागरण नहीं करवाया। उस समय जागरण को कह के मां अन्तर–ध्यान हो गई। (पृ0 21)

"रुकमणी घर जाकर जागरण की तैयारियां करने लगी।" (पृ0 23)

"तारा अपने मन में विचार कर रही है कि मैं कैसे जागरण पर जाऊं क्योंकि राजा जी जाग रहे थें।" (पृ0 24)

"उधर तारा भी मां के आगे मिन्नत गुजार रही है तारा की अर्ज मां तक पहुंची थोड़ी ही देर में राजा जी को नींद आ गई और तारा वहां से उठकर जाने लगी।" (पृ0 25)

"पीछे से राजा हरिश्चन्द्र की आंख खुली तो देखा वहां पर तारा नजर नहीं आई। क्रोध में उसने तलवार उठाई और कहने लगा जहां पर भी तारा नजर आयेगी उसका सिर धड़ से अलग कर दूंगा।" (पृ0 25)

"उसी समय तारा ने भगतों से कि जल्दी प्रसाद का भोग माता जी को लगाओ। ऐसा न हो कहीं मेरे राजा जी की नींद खुल जाये। मैं तो उनके सोते–सोते ही महल में पहुंचना चाहती हूं। भगतों ने उस समय माता महाकाली जी को मांस, मदिरा आदि को भोग लगाया।' (पृ0 26)

"सबसे पहले तारा को जाना था इसलिये प्रसाद दिया। थोड़ा–सा खाकर बाकी का प्रसाद लेकर जैसे ही बाहर पहुंची राजा ने तारा का रास्ता रोक लिया। राजा को वहां पाकर तारा हैरान रह गई। राजा ने अपने हाथों में तलवार ली हुई थी। कहने लगे तारा तू मुझे अपनी झोली दिखा जिसमें तूने मांस, मदिरा आदि भर रखा है। तारा राजा जी को समझाती है कि मेरी झोली में तो पान सुपारी तथा नारियल है। राजा कहने लगे मैंने अपनी आंखों से देखा है जो कुछ तूने अपनी झोली में लिया है। इसलिये तू मुझे अपनी झोली दिखा जो कुछ भी होगा अभी मालूम हो जायेगा।" (पृ0 27)

"राजा की हठ को देखकर तारा मां शेरांवाली को याद करने लगी कि मां मेरी रक्षा करो। यदि

www.thearyasamaj.org

राजा जी ने मेरी झोली की ये सब वस्तुएं देख लीं तो वह मुझ को जीवित नहीं छोड़ेंगे तब मां तुम्हारे प्रसाद का भी निरादर होगा।" (पृ0 27)

"थोड़ी देर में तारा के मन में ऐसे प्रतीत हुआ जैसे कि मां ने हुक्म दिया हो कि तू अपनीं झोली को राजा को दिखा दे। ऐसा ख्याल आते ही तारा ने अपनी झोली को राजा के सामने खोल दिया लेकिन वहां पर मां की शक्ति से सभी वस्तुयें तबदील हो गईं जो भी तारा ने कहा था कि राजा जी मेरे पास पान, सुपारी तथा नारियल हैं, मांस, मदिरा की जगह वही इनमें बदल गईं।" (पृ0 27)

"राजा जी यह सब देख हैरान रह गये और कहने लगे कि मैंने तो तारा की झोली में मांस, मदिरा (शराब) आदि देखी थी लेकिन यह तो पान, सुपारी, बताशे तथा नारियल निकले। तब राजा तारा सें कहने लगे यह तुम्हारा कैसा पन्थ है मुझे बताओ। रानी ने कहा राजाजी यदि पन्थ पूछना है तो महलों में चलो वहां चलकर बताऊंगी। उस समय तारा ने सोचा शायद राजा जी महलों में जाकर अपने राजकार्यों में लग जायेंगे और पन्थ की बातों को भूल जायेंगे। दोनों ही महल की ओर चल पड़े। महल में पहुंचते ही राजा जी ने पहला सवाल तारा के आगे वही रखा कि तारा तू पन्थ बता।" (पृ0 27)

"राजा के बार-बार हठ करने पर अन्त में हारकर तारा ने कहा यदि राजा जी पन्थ ही पूछना है तो ऐसा करो, जो घोड़ा तुम्हें इन्द्र के पास से मिला था और तुम्हें प्रिय भी है उसका शीश काटकर लाने पर मैं तुम्हें पन्थ बताऊंगी।" (पृ0 28)

"राजा ने अपने मन में न तो कुछ सोचा और न विचारा सीधे तबेले में पहुंच जहां घोड़ा बंधा था। वहां अपने घोड़े का शीश काट लिया और शीश को लेकर तारा के पास आया और कहा ले तारा मैं अपने नीले घोड़े का शीश ले आया हूँ। अब पन्थ बता।" (पृ0 28)

"तभी तारा ने राजा से कहा यदि आपने पन्थ पूछना है तो एक काम और करो कि अपने इकलौते बच्चे का शीश काटकर यज्ञ रचाओ तभी पन्थ मालूम हो जायेगा।" (पृ0 28)

"उस समय राजा ने अपने बेटे को बताया। तारा से एक पन्थ पूछना है जिसके लिये तारा ने एक शर्त रखी है कि मैं अपने बेटे का शीश काट कर उसका यज्ञ रचाऊं तभी वह मुझे पन्थ बतायेगी। इसलिये मैं तेरा शीश काटने के लिये आया हूं। तो उस समय बेटे ने अपने पिता जी से कहा बेशक मेरा शीश काटकर ले जाओ परन्तु तारा तुम्हें वह पन्थ नहीं बतायेगी। मेरे से ज्यादा आप तारा को नहीं जानते क्योंकि मैंने तो उसके पेट में रहकर गर्भ जून भुगताई है और उसकी ही गोद में खेल-खेलकर बड़ा हुआ हूं।" (पृ0 29)

"लेकिन राजा ने अपने बेटे की भी एक न मानी। उसको तो पन्थ पूछने का भूत सवार हो गया था। तब दो घड़ी भर भगवान का ध्यान धर के राजा जी ने वह खून से सनी तलवार बेटे की गर्दन पर चला दी और बेटे का शीश लेकर तारा के पास पहुंचा।" (पृ0 29)

"तारा ने कहा अभी काम पूरा नहीं हुआ। अब बेटे और घोड़े को काटकर टुकड़े-टुकड़े करे किसी

www.thearyasamaj.org

बर्तन में डालकर पकाना है।" (पृ0 29)

"राजा ने अपने बेटे तथा घोड़े को काट-काट कर टुकड़े-टुकड़े किया और बर्तन में डालकर आग की भट्टी पर रखने लगा तो मन में ख्याल आया, तारा तो कहती थी कि मेरी मां बहुत ही शक्तिवान है और सभी के मन की इच्छा पूर्ण करती है। क्यों न तारा से कहा जाये यदि तेरी मां सच्ची है तो इस बर्तन के नीचे अपनी शक्ति से आग जलाये। तब राजा ने वह बात तारा से कही तो तारा असमंजस में पड़ गई और मां को याद करने लगी।" (पृ0 30)

"तभी मां की शक्ति से उस बर्तन के नीचे आग जली और बर्तन में पड़े बेटे और घोड़े के टुकड़े पक कर तैयार हो गये। तब तारा ने उस बर्तन को उठाकर माता महाकाली जी को भोग लगाया और राजा जी को उसमें से प्रसाद के तौर पर दिया। तब तारा ने राजा जी से कहा इस प्रसाद को खा लो ज्योंहि राजा जी ने प्रसाद खाना शुरू किया तो उन्हें डर सा लगने लगा। राजा जी ने उस प्रसाद की जैसे ही एक डली मुंह में रखी तो घोड़े की याद आई जब दूसरी डली मुंह में रखी तो उन्हें बेटे की याद आ गई तीसरी डली खाई तो आंखों से आंसू बह निकले चौथी डली के खाते ही राजा जी से रहा न गया। तब कहने लगे तारा मेरे मन को कुछ होने लगा है मैं अब तेरा पन्थ नहीं देखना चाहता अब तू ही मेरी रक्षा कर।" (पृ0 30)

"तब तारा ने राजा जी को कहा मैंने तो आपको पहले ही कहा था कि इस पन्थ का पाना तलवार की नोंक पर चलना है लेकिन आपने मेरी एक बात न मानी अब रोने से क्या हो सकता है।" (पृ0 31)

"तब राजा ने तारा से कहा अब मुझ से पुत्र वियोग नहीं सहा जाता। तू मेरे पुत्र को जीवित कर दे, मैं अपने बेटे की कसम खाता हूं कि आगे से तेरा पन्थ नहीं पूछूंगा।" (पृ0 31)

"राजा के इतने विलाप को देखकर तारा ने फिर मां को याद किया।" (पृ0 31)

"मां ने उसी समय राजा जी के घोड़े तथा बेटे को जीवित कर दिया।" (पृ0 31)

उपर्युक्त बातें पढ़कर प्रत्येक सुशिक्षित, बुद्धिमान विचारशील एवं निष्पक्ष व्यक्ति यह अनुभव करेगा कि लेखक महोदय ने अशिक्षित तथा अन्धविश्वासी लोगों को पथ भ्रष्ट करने के लिए ही ऐसी निराधार बातें (जो न केवल तर्क शून्य है, अपितु विज्ञान एवं सृष्टि नियम के विरुद्ध हैं) लिख दी हैं। क्या वह यह बतलायेंगे कि ऐसी विचित्र एवं असम्भव बातें किन-किन पुस्तकों में लिखी हुई हैं? उन पुस्तकों के क्या नाम हैं। उन्हें लिखने तथा प्रकाशित करने वाले कौन हैं? वे पुस्तकें कहां से मिल सकती हैं? क्या उन्होंने स्वयं वे पुस्तकें पढ़ी हैं या सुनी सुनाई बातों के आधार पर ही अपनी पुस्तिका के बत्तीस (32) पृष्ठ काले कर दिये हैं? यदि देवी जी में इतनी शक्ति है कि वह किसी मनुष्य अथवा पशु के कटे हुए सिर को उसके धड़ के साथ जोड़कर पुनः जीवित कर सकती है जैसा कि अकबर के घोड़े और राजा हरिश्चन्द्र के घोड़े एवं पुत्र के सम्बन्ध में लिखा गया है तो यवनों के भारत पर आक्रमण करने के कारण जो हिन्दू राजा उनके सैनिक तथा हाथी, घोड़े शत्रुओं के हाथों से रणभूमि में मारे गये थे तो उन्हें देवी जी फिर से क्यों न जीवित कर दिया? यदि उस विकट समय में कोई ऐसा चमत्कार दिखलाया होता तो अब तक समस्त

www.thearyasamaj.org

विश्व के लोग देवी जी के उपासक बन गये होते। यदि अकबर ने देवी जी का चमत्कार देखकर उस पर सवा मन सोने का छत्र चढ़ाया था तो अकबर स्वयं उसके मन्त्री एवं परिवार के सदस्य तथा भारत के अन्य मुसलमान इस्लाम से विमुख होकर सत्य सनातन वैदिक धर्म की शरण में क्यों न आ गये?

महाभारत के युद्ध के समय देवी जी कहां विश्राम कर रही थीं? उसने वीर अभिमन्यु को (जिस पर कौरवों के छः योद्धाओं एवं महारथियों ने इकट्ठे मिलकर आक्रमण करके उसे मार डाला था) क्यों न जीवित कर दिया? यह बात सर्वविदित है कि पाकिस्तान बनने से एक वर्ष पूर्व और पाकिस्तान बन जाने के पश्चात् लाखों निर्दोष व्यक्ति मारे गये थे और करोड़ों बेघर हो गये। जहां सहस्रों बहिनों ने अपने सतीत्व की रक्षार्थ आत्महत्या कर ली वहीं सहस्रों का अपहरण हुआ। उस समय में देवी जी ने उनकी रक्षा क्यों न की? इस प्रकार सात वर्ष पूर्व जब बंगला देश में पाकिस्तान का दमन-चक्र चला तीस लाख व्यक्ति मारे गये और एक करोड़ लोगों को भारत में धकेल दिया गया। लाखों मकान और दुकानें जला दी गईं जिसके कारण तीन करोड़ व्यक्ति बेघर हो गये, लाखों हिन्दुओं को चुन-चुन कर मार डाला गया और लाखों देवियों का सतीत्व नष्ट किया गया। उस संकट के समय में देवी जी कहां गई थीं? उन्होंने अपने भक्तों की रक्षा क्यों न की?

देवी जी जब अपने सेवक "लंगरवीर" के साथ हस्तिनापु गई थीं तो उस समय उनके यातायात का कौन सा साधन था? क्या वह शेर पर चढ़कर गई थीं या घोड़े आदि किसी अन्य पशु पर? यदि शेर पर चढ़कर गई थीं तो क्या शेर को देखकर मनुष्य एवं पशु भयभीत तो नहीं हुए थे? क्या शेर ने अपनी उदर पूर्ति के लिए किसी मनुष्य पर अथवा पशु पर आक्रमण किया था? यदि नहीं किया था तो वह हस्तिनापुर में भूखा कैसे रहा? यदि किया था तो मनुष्य की हत्या का दण्ड किसे मिलेगा? शेर को तो नहीं मिल सकता क्योंकि वह तो भोग योनी में है। यदि हत्या का दण्ड देवी जी को मिलेगा तो उसे दण्ड कौन देगा? यदि परम् प्रभु दण्ड देंगे तो फिर देवी के बदले सृष्टि कर्त्ता एवं कर्मफल दाता प्रभु की उपासना क्यों नहीं करते? देवी जी कितने दिन हस्तिनापुर में ठहरी थीं? वह आजकल कहां विराजमान हैं?

क्या देवी जी का एक ही सेवक है? जिसका नाम आपने "लंगरवीर" लिखा है या उस जैसे कई सेवक हैं? यदि कई सेवक हैं तो उनके क्या नाम हैं? यदि एक ही सेवक है तो देवी जी की अपेक्षा वे लोग अधिक भाग्यशाली हैं जिनके घरों मे कई सेवक हैं। क्या "लंगरवीर" अब तक जीता है या काल के गाल में चला गया है? यदि मर गया है तो देवी जी ने उसे पुनः क्यों नही जिलाया? उसके रिक्त स्थान की पूर्ति अर्थ किसे नियुक्त किया गया है। यदि वह जब तक जीता है तो इस समय उसकी कितनी आयु हो चुकी है? वह विवाहित है या बाल ब्रह्मचारी? यदि विवाहित है तो उसकी कितनी पत्नियां और कितने बच्चे हैं उन सबके क्या नाम हैं? वे आजकल कहां रहते हैं? देवी जी के पास कितने शेर हैं? क्या वे देवी जी के साथ रहते हैं या स्वतन्त्र रूप से इधर-उधर घूमते हैं?

-(शेष अगले अंक में)

www.thearyasamaj.org

पारस्परिक सहायता

लेखकः बाबू सूरजभान वकील

मनुष्य का जीवन निर्वाह परस्पर के व्यवहार से ही होता है और जितनी उत्तम रीति से यह पारस्परिक व्यवहार चलाया जाता है उतना ही मनुष्य का जीवन सुखमय बनता है। अब हम यह दिखलाना चाहते हैं कि यह व्यवहार किस तरह किया जाना चाहिए कि जिससे हमारा जीवन सुखमय हो जावे। इसमें सबसे पहली बात समझने के योग्य यह है कि परस्पर का व्यवहार तो साधारण रीति से ऐसा ही होता है कि जो कुछ हम किसी को दें उसका पूरा बदला ले लें। जैसे कि एक पैसा देकर एक पैसे मूल्य की चीज ले लेना, या किसी का एक पैसे का काम करके उससे एक पैसा नकद ले लेना, या किसी का एक पैसे का काम करके उससे एक पैसा नकद ले लेना, अथवा जितना किसी का काम किया जाय उतना ही उससे करा लेना। परन्तु मनुष्य का जीवन निर्वाह केवल ऐसी ही तौल–जोख की अदला–बदली से नहीं चल सकता है, वरन् उसको बहुत सी बातों में अपना परस्पर का व्यवहार ऐसा रखना पड़ता है कि **जिसमें** पूरे बावन तोले पाव रत्ती के बदले का ख्याल हर्गिज नहीं हो सकता है, बल्कि उसे केवल यही ख्याल रखना पड़ता है कि जब–जब जरूरत पड़े तब–तब वह उसके काम आ जाय। जैसे कि जब एक घर में इकट्ठे रहने वाले पति–पत्नी या दो भाइयों में से एक बीमार हो जाता है तब दूसरा भाई उसकी दवा–दारू और सेवा–शुश्रुषा करता है और ऐसी परस्पर की सहायता से उस कुटुम्ब का जीवन–निर्वाह होता है। इस प्रकार की पारस्परिक सहायता में पूरे–पूरे बदले की बात कभी नहीं निभ सकती है। क्योंकि अगर घर के चार आदमियों में से सबसे पहले एक आदमी बीमार हो जाय और उस समय घर के तीनों आदमी यह सोचने लगें कि हमको तो कभी बीमार पड़कर इससे सेवा–सुश्रुषा कराने की जरूरत नहीं पड़ी है, फिर हमीं क्यों इसकी सेवा–शुश्रुषा करें, तो ऐसी स्थिति में बेचारे उस बीमार पर बुरी बीतेगी। इसी प्रकार जब कभी उन तीनों में से कोई बीमार होगा तो वह भी अलग पड़ा दुःख भोगेगा और कोई उसके पास न जायगा। सारांश, इस प्रकार है कभी न कभी सबको दुःख उठाना पड़ेगा।

इसके सिवा यदि इन चारों में से एक को बीमारी बारंबार सताती है और बाकी तीनों को कभी–कभी इत्तफाक से ही हुआ करती है तो पूरा–पूरा बदला चुकाने की सूरत में तो वे तीनों आदमी उसकी सेवा–शुश्रुषा यदा कदा ही किया करेंगे, बारंबार हर्गिज न करेंगे। यदि किसी कारण से ये तीनों भी बारंबार बीमार होने लगें तो वह चौथा भी उनकी बारंबार सेवा न करेगा, बल्कि जितनी बार उन्होंने इसकी समय वे भी यों ही पड़े–पड़े सहेंगे। इसके सिवा किसी को किसी प्रकार की बीमारी होती है और किसी को किसी तरह की। कोई तो एक प्रकार की सेवा चाहता है और कोई दूसरी प्रकार की। तब पूरे–पूरे बदले का ख्याल रखने की हालत में एक आदमी उसकी वैसी ही सेवा करने को तैयार होगा जैसी कि उसने उसके द्वारा

www.thearyasamaj.org

कराई होगी। परन्तु दूसरे को वैसी ही सेवा की जरूरत नहीं पड़ती, इसलिए कोई किसी के काम न आ सकेगा और पशुओं की तरह सबको अलग-अलग दुःख उठाना पड़ेगा। अतएव मनुष्यों को अपनी सुख-शांति के लिए पारस्परिक सहायता का यही नियम चलाना चाहिए और इसी से उनका जीवन-निर्वाह हो सकता है कि एक के बीमार पड़ने पर घर के सभी आदमी उसकी सेवा-शुश्रुषा करें, उसके काम आवें, और मन में अदले-बदले का कुछ भी ख्याल न लाकर जरूरत के अनुसार उसकी टहल करें। आपस में ऐसा उदार व्यवहार करने से ही घर के सब आदमियों को पूरा-पूरा आराम मिल सकता है और उनकी बहुत सी तकलीफें रफा हो सकती हैं।

एक घर में इकट्ठे रहनेवाले लोगों के सिवा हमें अपने मित्रों, पुरा पड़ौसियों, जाति-बिरादरीवालों, नगरनिवासियों और मनुष्यमात्र के साथ इसी प्रकार की उदारता का व्यवहार जारी करके अपने सुख साधनों को और भी विस्तृत करना चाहिए। यद्यपि इस प्रकार की सहायता परोपकार कहलाती है, परन्तु वास्तव में तो इससे अपनी ही सहायता के अनेक द्वार खुल जाते हैं और भारी-भारी संकट बात की बात में दूर हो जाते हैं। उदाहरणार्थ मान लीजिए कि किसी के घर चोर अथवा डाकुओं के आने पर यदि पुरा पड़ौसवाले आकर उसकी रक्षा न करें तो ऐसी दशा में चोर एक-एक करके सभी का घर लूट ले जाया करें और जो घरवाला जरा भी चूं-चपड़ करे तो वह जान से मारा जाय। इस तरह परस्पर एक दूसरे की सहायता तथा रक्षा न करने से सारा नगर ही विपत्ति में फँसा रहे और उसमें कभी सुख-शांति स्थापित न हो सके। परन्तु किसी के घर चोर आते ही जब सब नगरनिवासी दौड़कर वहाँ पहुँचते हैं और उसके जान-माल की रक्षा करते हैं, तब उस नगर में जाकर चोरी करने की हिम्मत चोरों की नहीं पड़ती है और सभी नगरनिवासी बेफिकर होकर आनन्द से सोते हैं।

यद्यपि इस प्रकार किसी एक के घर चोर आने पर अन्य पुरुषों का उसकी रक्षा के लिए आना परोपकार कहलाता है; परन्तु वास्तव में इससे अपना ही उपकार होता है। क्योंकि ऐसे परोपकार करते रहने से हम सब अपने अपने घर बेफिकरी से सोते हैं और इस बात का भरोसा रखते हैं कि यदि हमारे घर पर चोर आ जावेंगे तो सब आदमी हमारी रक्षा के लिए दौड़े आवेंगे और जिस तरह हो सकेगा हमारे जान-माल की रक्षा करेंगे। यद्यपि इस व्यवहार में बदला हुआ करता है, तथापि इसमें बदले की तौल-जोख करने और इस बात का ख्याल करने से काम नहीं चल सकता है कि हमारे घर चोर आने या अन्य आपत्ति पड़ने पर जो जो लोग हमारी रक्षा के लिए आये थे हम भी उन्हीं उन्हीं के घर जायँगे। क्योंकि ऐसा करने से बदला चुकाने के लिए हमको उम्र भर अपने मकान पर ही रहना पड़ेगा। एक दिन के लिए भी हम बाहर न जा सकेंगे। क्योंकि न मालूम किस दिन उन लोगों के यहाँ चोर आ जायँगे जो हमारी रक्षा करने के लिए आये थे और हमको भी उनकी रक्षा करने के लिए जाना पड़ेगा। इसी प्रकार जिन-जिन लोगों की रक्षा के लिए हम पहले जा चुके हैं उनको भी हम सदैव घर पर ही रहने के लिए मजबूर करेंगे और उनको एक दिन के लिए भी बाहर न जाने देंगे, क्योंकि न मालूम किस दिन हमारे यहाँ

www.thearyasamaj.org

चोर आ जायँ और बदले में उन लोगों को सहायता के लिए बुलाना पड़े। इसके सिवा हमको सारी उम्र मजबूत और तनदुरुस्त भी रहना पड़ेगा, जिससे हम चोर आने पर उनकी सहायता के लिए जा सकें जो हमारे यहाँ आये थे। इसी तरह जिनकी सहायता को हम पहले जा चुके हैं उनको भी मज़बूर करें कि वे कभी बीमार न पड़ें और सदैव तनदुरुस्त रहें जिससे वे हामरे घर चोर आने के दिन हमारी सहायता के लिए आ सकें। परन्तु ऐसा होना बिल्कुल असम्भव है। अतएव ऐसी पारस्परिक सहायता में बदले की तौल-जोख करना अनुचित है, बल्कि इसमें तो इस उदार नियम से ही काम लेना उचित होगा कि जब किसी भी व्यक्ति के घर चोर आवें या उस पर ऐसी ही कोई अन्य विपत्ति पड़े तब सभी लोग-जो उस समय मौजूद हों और उसे सहायता दे सकते हों। उसकी रक्षा के लिए दौड़े जावें और कभी इस बात का ख्याल अपने मन में न लावें कि उससे हमको कभी सहायता मिली है या नहीं, या आगे उससे मिलने की आशा है या नहीं। इस उदार भाव के अनुसार व्यवहार करने से ही सबकी रक्षा होती है और किसी को कुछ भी दिक्कत नहीं उठानी पड़ती है।

बल्कि ऐसा करने से उन अबला स्त्रियों, निर्बल बच्चों, बीमारों और अपाहिजों की भी रक्षा करने में भी किसी प्रकार का परोपकार नहीं है, वरन् यह भी एक प्रकार का अदला-बदला ही है। क्योंकि कौन कह सकता है कि मैं सदा बलवान ही बना रहूँगा और कभी अपाहिज या बीमार न बनूंगा, अथवा असमय में मरकर अपनी अबला स्त्री और बच्चों को ऐसी अवस्था में छोड़ जाऊँगा जिसमें हर हालत में दूसरों की सहायता का मुहताज बनना पड़ता है। इसलिए अबला स्त्रियों, बच्चों, बीमारों और अपाहिजों की सहायता करना भी एक तरह का बदला ही है। क्योंकि ऐसा करने से सबको इस बात का पूरा-पूरा भरोसा रहता है कि किसी कारण से या भाग्यवशात् अगर हम भी ऐसी ही स्थिति को पहुँच जायँ तो उस समय हमारी और हमारे बाल बच्चों की रक्षा अवश्य हो जायगी। इसलिए जो मनुष्य स्त्रियों, अपाहिजों आदि की रक्षा और सहायता जितनी अच्छी तरह से करता है, समय पड़ने पर उसे उतनी ही अच्छी रीति से सहायता मिलने की आशा भी रहती है।

सुना जाता है कि एक समय किसी जाति के लोगों में यह दस्तूर था कि उनमें से जब कोई मनुष्य कंगाल हो जाता था तब उसको सब लोग एक एक रुपया और दस-दस ईंटें दे दिया करते थे। वे लोग गिनती में एक लाख थे, इसलिए उसके पास सहज ही दुकान चलाने के लिए एक लाख रुपया और मकान बनाने के लिए दस लाख ईंटें जमा हो जाती थीं और वह तुरन्त उनकी बराबरी का बन जाता था। इस प्रकार उस जाति में कोई भी गरीब नहीं होने पाता था और न उनमें से किसी के दिल में अपनी संतान के गरीब हो जाने का खटका रहता था। परन्तु यह पारस्परिक सहायता उसी समय तक चल सकती है जब तक कि बदले की पूरी-पूरी तौल-जोख न की जावे और न कोई अपनी सहायता को परोपकार बतलाकर अहसान ही करे। क्योंकि ऐस व्यवहारों में सम्भव है कि किसी को सात पीढ़ी तक भी सहायता न लेनी पड़े और हजारों बार सहायता देनी पड़े, या अनेक बार सहायता लेनी पड़े और बहुत कम बार दूसरों को

www.thearyasamaj.org

सहायता देने का मौका आवे।

शोक है आजकल भारतवर्ष में किसी भी जाति में इस प्रकार की सहायता नहीं की जाती है, इसीलिए बड़ी-बड़ी धनाढय जातियों के लोग भी कंगाल होकर मुटठी भर अनाज के लिए तरसते दिखाई देते हैं। इस तरह बारी-बारी से प्रायः सबकी संतानों को कभी न कभी यह दिन देखना पड़ता है और सहायता के बिना धीरे-धीरे सभी खाक में मिलते जाते हैं। सहायता करने की यह सुन्दर प्रथा मिट जाने पर भी अब भी कई बातों में जातीय सहायता की कुछ रीतियाँ दिखाई देती हैं। जैसे कि किसी के घर मौत हो जाने पर सब बिरादरी के लोग एकत्रित होकर उसकी अन्त्येष्टि क्रिया करते हैं और इस कार्य में कभी अदले-बदले का ख्याल मन में नहीं लाते हैं।

इस प्रकार की सहायता को निःस्वार्थ सेवा कहते हैं और यद्यपि यह सेवा निःस्वार्थ ही नजर आती है और निःस्वार्थ भाव से की भी जाती है, परन्तु वास्तव में इससे हमारा पूरा-पूरा स्वार्थ सधता है। क्योंकि इस सहायता के प्रचलित रहने के कारण जरूरत पड़ने पर हमको भी बिरादरी के लोगों और पुरा-पड़ौसियों से इसी प्रकार सहायता मिल जाया करती है। इसी तरह किसी व्यक्ति के मर जाने पर उसके सम्बन्धी और बिरादरी के लोग उसकी स्त्री तथा बच्चों को कुछ नगदी भी देते हैं, परन्तु वे इस बात का हिसाब नहीं लगाते हैं कि हमको इससे कितनी बार लेना पड़ा है और कितनी बार देना पड़ा है। बल्कि उस समय उसे कुछ न कुछ देना ही अपना कर्तव्य समझते हैं। और इस प्रकार बारी-बारी से सबको सहायता मिल जाया करती है। यह निःस्वार्थ सहायता सबकी भलाई करती है। परन्तु खेद है कि अब यह सहायता नाम मात्र को रह गई है और लोगों की मूर्खता ने इसकी मिट्टी पलीद कर दी है। क्योंकि इस सहायता का बदला उसे तुरन्त ही चुकाना पड़ता है, बल्कि सहायता से भी दुगुना चौगुना खर्च करके बिरादरी के लोगों को खूब तरमाल खिलाना पड़ता है और उसे मृतक के शोक के साथ-साथ धन का भी शोक मनाना पड़ता है। प्राचीन समय में इसी प्रकार बिरादरी के लोग विवाह के समय भी सहायता किया करते थे और अदले-बदले अथवा तौल-जोख का कुछ भी विचार नहीं रखते थे। ऐसा करने से जरूरत के समय सबको भरपूर सहायता मिल जाया करती थी और इसके लिए किसी को अधिक चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी। परन्तु अब इस प्रथा में भी फरक पड़ गया है। इस सहायता को लोगों ने व्यवहार बना लिया है, अर्थात् विवाह के समय जो कुछ सहायता दी जाती है वह व्यवहार के नाम से पुकारी जाती है और बिना सूद की साहूकारी समझी जाती है। यही नहीं, इस सहायता का बदला चुकाने के लिए उसे तुरन्त बिरादरीवालों तथा व्यवहारी लोगों को बढ़िया-बढ़िया खाना खिलाना पड़ता है; जिससे बेचारे विवाह वाले को अपने विवाह के आवश्यक कामों की फिकर तो पीछे डाल देनी पड़ती है, परन्तु बिरादरी तथा व्यवहारियों को खिलाने-पिलाने की चिन्ता आगे रखनी पड़ती है। यदि इस कार्य में जरा भी कसर रह जाती है तो ये सब लोग मिलकर उस बेचारे का सिर खा जाते हैं और उसकी नाकों दम कर डालते हैं।

-(शेष अगले अंक में)

www.thearyasamaj.org

स्वास्थ्य

लेखकः- श्यामसुन्दर दास

मनुष्य के लिये स्वास्थ्य रक्षण एक बड़ा धर्म है और इसकी ओर से उदासीनता भारी पातक है। इसलिये आत्म-शिक्षण के तीन मुख्य विभागों में से हम इसी का वर्णन पहले करते हैं। स्वास्थ्य रक्षण के लिये पाँच बातों पर ध्यान देना परमावश्यक है, अर्थात् गृह, वस्त्र, भोजन, व्यायाम तथा रहाइस। इन सब का विचार हम पृथक-पृथक करते हैं-

मकान

गृह ऐसा होना चाहिए कि जिसमें रहने से मनुष्य पर किसी प्रकार का रोग अधिकार न करने पावे। प्रत्येक मनुष्य के लिये बस्ती से दूर गृह का बनाना कई प्रकार से कष्टप्रद होगा, किन्तु स्वास्थ्य के लिये यही गुणकारी है। अतः यथासाध्य बस्ती से कुछ हटकर निवास-स्थान का निर्माण श्रेयस्कर है। कम से कम वह घनी बस्ती अथवा दुर्गन्धियुक्त पदार्थों के निकट न हो। नीची भूमि में पानी भरने से भाँति-2 के रोगकारक कृमि आदि का स्वास्थ्य पर बड़ा ही हानिकारक प्रभाव होता है। ऐसे स्थानों पर निकेत की स्थिति अनुचित है। यदि बहते हुए जल, समुद्र, वन, पहाड़ आदि के निकट भवन की स्थिति हो सके तो बहुत ही अच्छा है। पहाड़ के ऊपर गृह और भी गुणकारी होगा। सदन के निमित्त ऊँची पृथ्वी भी श्रेयस्कर है।

मकान के दरवाजे, खिड़की, झरोखे आदि ऐसे होने चाहिये कि शुद्ध वायु का प्रवेश उसमें भली भाँति हो सके। जिधर से स्वच्छ हवा आने की आशा हो उस ओर खिड़की, झरोखे आदि बहुतायत से होने चाहिए। आलय के कमरे ऐसे होने चाहिए कि उनमें यथासाध्य हवा और रोशनी का बहुतायत से प्रवेश हो सके। दरवाजे खिड़की यथासाध्य एक दूसरे के सामने अंत की दीवार पर्यंत एक सीध में होने चाहिए। इस से लाभ यह होता है कि हवा सब कमरों में बे रोक टोक चली जाती है जिससे उनकी गंदगी दूर हो जाती है। कोई भी ऋतु क्यों न हो किन्तु प्रतिदिन प्रातःकाल दो घंटे के लिये घर के सब दरवाजे और खिड़कियाँ खोल देनी चाहिए, जिससे रात की खराब हवा निकल कर प्रत्येक स्थान में ताजी हवा भर जाय।

कमरे यथासाध्य ऊँचे और हवादार होने चाहिए। मकान की फर्श, छत, दीवारों आदि यथासाध्य पक्की हों और किसी स्थान में पानी भरे रहने का कुचक्र न हो। पाखाना, पेशाबघर, नाली आदि पर विशेष ध्यान रहे। ये हवादार और साफ हों तथा कम से कम प्रति सप्ताह एक बार फिनाइल से धोई जावें। जो लोग इतना व्यय न उठा सकें वे स्वच्छ जल से ही उन्हें धुला दें। पाखाना, पेशाबघर आदि की फर्शों पर बड़ा ही ध्यान रखना चाहिए। इनका पक्का होना परमावश्यक है। यथासाध्य भवन के चारों ओर अथवा कम से कम आगे पीछे कुछ भूमि अवश्य छोड़ी जावे जिसमें पतली कटी हुई घास उगी रहे। यह बात वायु

www.thearyasamaj.org

संशोधन में बड़ा सहारा पहुँचाती है। भवन के निकट बहुत वृक्षों का होना अनुचित है, किन्तु थोड़े वृक्ष और पौधे सदैव लाभकारी होते हैं। रसोई घर बहुत ही साफ होना चाहिए। उसके निकट पानी भरने का कोई ऐसा स्थान न हो कि जिसमें उत्पन्न दुष्ट कृमि भोज्य पदार्थों में मिलकर मनुष्य में रोग उत्पन्न करें। सारे घर को बुहारी आदि द्वारा नित्य साफ करना चाहिए और साल में दो बार उसमें रक्खे हुए सब पदार्थों को स्थानांतरित करके उसका पोतवाना भी आवश्यक है। यदि चूना अप्राप्य हो तो चाहे जल ही का व्यवहार करें किन्तु सब दीवारों और छतों का साल में दो बार धुलना परमावश्यक है। यथासाध्य मकान में कुछ दो मंजिलें कमरे अवश्य हों किन्तु ऐसा दुमंजिला भी न हो जिससे आंगन कुंआ सा हो जाय और वायु एवं सूर्यकिरणों की रुकावट हो। सोने का कमरा अवश्यमेव हवादार हो और यथासाध्य ऊँचा तथा कुछ लम्बा चौड़ा हो। उसमें सन्दूक आदि बहुत से पदार्थ न रक्खे हों। यथासाध्य चारपाई के अतिरिक्त उसमें बहुत थोड़े से आवश्यक पदार्थ हों। रात में वह बिलकुल अंधेरा न रक्खा जाय और प्रकाश भी तीव्र न हो। थोड़ा सा प्रकाश देनेवाली मोमबत्ती अथवा देशी तेल का दीया जलाना उचित है। शयनागार में मिट्टी का तेल भूलकर भी न जलने पावे। एक ही शयनागार में सदैव न लेटना चाहिए, वरन् पन्द्रह बीस दिन में उसे अवश्य बदल देना चाहिए। जिस कोठरी में भोज्य वस्तु तथा धान्यादि का संग्रह हो वह ऐसी होनी चाहिए कि उसमें चूहा इत्यादि प्रवेश न कर सकें। यदि हो सके तो उसकी फर्श खूब पक्की बनवावें और दीवारों में मोटे लोहे के भारी छल्ले लगवा कर उन्हीं में लोहे, ताँबे, पीतल आदि के बर्तन लटका दें और उन्हीं में सब पदार्थ रक्खे। पृथ्वी पर कोई खाद्य पदार्थ न संचित किया जाय। प्रत्येक बर्तन का ढक्कन उसके मुँहगड़ से भली भांति सटा होना चाहिए। इतने पर भी उस कमरे में बुहारी आदि का प्रबन्ध अच्छा रहे। मक्खन मुरब्बा आदि के लिये चारों ओर से जालीदार अलमारी का होना उचित है जो पृथ्वी पर न रक्खी जाकर छत से टँगी रहे।

वस्त्र

हमारे यहाँ गर्मी और जाड़े के लिये पृथक्-पृथक् वस्त्र रहते हैं। जाड़े में ऐसे कपड़े पहनें कि जिनसे कष्टप्रद शीत का निवारण हो जाय, किन्तु ऐसे मोटे या इतने गरम न हों कि मनुष्य को पसीना आ जाय या बिल्कुल जाड़ा न लगे। कपड़ा ऐसा होना चाहिए कि जिससे कुछ हलका सा जाड़ा मालूम पड़ता रहे। दो चार बहुमूल्य वस्त्रों से बहुत से घटिया मेल वाले कपड़े स्वास्थ्य के विचार से श्रेष्ठतर हैं। यथासाध्य एक वस्त्र एक ही दिन वरन् एक ही बार पहनें। दूसरी बार पहनने के पूर्व उसे अवश्य धुला डालें। यदि आर्थिक दशा के कारण ऐसा संभव न हो, तो प्रति सप्ताह तीन या दो कुर्ते और पायजामा बदलें, इनके ऊपर पहनने वाले वस्त्र भी सप्ताह में एक या दो बार अवश्य बदल डालें। जो वस्त्र धुलाना न चाहे उसे किसी अन्य वस्त्र के ऊपर पहनें, खुले शरीर पर कभी नहीं। बहुत महीन वस्त्र मोटे वस्त्रों की अपेक्षा कुछ कम लाभदायक होते हैं। स्वेदपूर्ण शरीर को खुली हवा में वस्त्रहीन एकाएक न करें। सारांश यह है कि स्वास्थ्य के विचार से वस्त्रों की उत्तमत्ता पर उतना ध्यान न देना चाहिए जितना कि उनकी सफाई पर। गर्मी में भी

www.thearyasamaj.org

शरीर को प्रायः किसी न किसी वस्त्र से ढक रहना उचित है।

कपड़ा बहुत तंग न पहनना चाहिए। कहा गया है कि सिर को ठंडा और पैरों को गरम रक्खो। इसलिये मोजे आदि का पहनना अच्छा है। सिर पर अंग्रेजी टोपी अथवा बड़ी लट्टूदार पगड़ी धारण करें जिससे सूर्यकिरणों द्वारा नेत्रों को क्लेश न हो। सिर के लिये वह पहनावा अच्छा है जिसमें नेत्रों के निकट कोई हरा वस्त्र रहे, क्योंकि यह ज्योतिरक्षक है। छत के नीचे टोपी अथवा पगड़ी का उतार देना श्रेयस्कर है कि जिससे सिर ठंडा रहे। रजाई से कम्बल श्रेष्ठतर है क्योंकि उसमें स्वल्प छिद्रों द्वारा वायु का प्रवेश होता रहता है।

भोजन

पंडितों का कथन है कि "खाने के लिये न जियो पर जीने के लिये खाओ।" यही कथन भोजन सम्बन्धी विचारों का मूल सूत्र समझना चाहिए। भोजन नियमबद्ध, साधारण और निर्मादक होना चाहिए। यह नहीं उचित है कि एक दिन दस बजे भोजन हो और दूसरे दिन दो बजे। वैद्यों ने कहा है कि **"याम मध्ये न भोक्तव्यम् यामयुग्मनलंगयेत्"** अर्थात् सूर्योदय से एक पहर भीतर भोजन न करे और दूसरे पहर के भीतर अवश्य कर लेवे। साधारणतया भोजन ऐसे समय में करना चाहिए कि जिसमें सायंकाल से घंटा दो घंटा पूर्व ही वह पच जाय। जब मनुष्य को तीसरे पहर या चार पाँच बजे अच्छी भूख लगे, तभी समझना चाहिए कि उसका प्रातःकालिक भोजन का समय एवं भोज्य पदार्थ उचित था। सायंकालिक भोजन ऐसे समय पर होना चाहिए कि जिसके तीन घंटा पीछे तक मनुष्य निद्रावश न हो। स्यात् इसी विचार से जैन धर्मावलंबियों ने दिन में ही भोजन कर लेना उचित माना हो। इस नियम से कुछ असुविधा अवश्य है किन्तु आयुर्वेद की यही आज्ञा है, इसलिये शिरोधार्य है। व्यायाम के पीछे तुरन्त भोजन करना अनुचित है। इसी प्रकार सायंकालिक भोजन के आध घंटा पूर्व से पुस्तकाध्ययन बंद कर देना चाहिए और भोजन करके शत पद चलना भी उचित है।

भगवान पतंजलि की आज्ञा है कि पूरे भोज्य स्थान (उदर) में से आधा भोजन से, चौथाई पानी से और शेष हवा से भरे। अनुभव ही हमें सिखलाता है कि संसार में भूख से उतने रोग नहीं होते जितने की बहु-भोजन की बहु-भोजन से। जहाँ तक हो भोजन की विशेषता को बचाए ही रहना बुद्धिमान का काम है। भोजन कैसा होना चाहिए इस प्रश्न पर संसार की विविध जातियों में कुछ मतभेद हैं। धर्म सम्बन्धी अनेकानेक नियम तथा उपनियम एक प्रकार से इसी प्रश्न के उत्तर हैं। सांसारिक जीवों के दाँतों की बनावट से अनेक तत्त्वज्ञों ने उनके योग्य भोजनों का वर्णन किया है। दार्शनिक शुद्धता भी इन्हीं कथनों में विशेष ज्ञात होती है। भारत में मांसाशन पर बड़ा ही विकराल मतभेद रहा है, किन्तु मानुषीय अनुभव इस मतभेद को कुछ उपहासास्पद कर देता है। हम देखते हैं कि बल एवं आयुदीर्घता में मांसाहारी जातियाँ मांस न खानेवाली जातियों से किसी प्रकार बढ़कर नहीं हैं। जो लोग मांस विशेषतया खावें उनके लिये दाल और दूध परमावश्यक नहीं है, किन्तु अमांसभक्षी लोगों के लिये द्विदल परमावश्यक है, क्योंकि दाल

www.thearyasamaj.org

में भी मांस से कुछ ही कम नाइट्रोजन का भाग है जो मांसतंतु बनने के लिये परमावश्यक है। बहु भोजन पचाने के लिये मनुष्य को महीन में दो दिन उपवास भी करना चाहिए। उपवास से यह प्रयोजन नहीं है कि एकादशी व्रत की भांति अन्न तो न खावे किन्तु उससे ढयोड़े फलाहार को चक्खे। यथासाध्य छत्तीस घंटे के लिये पाचनेंद्रिय को पंद्रहवें दिन विराम दे देना अच्छा है। यदि ऐसा करने में दूसरे दिन मलोत्सर्ग में कुछ कष्ट हो तो कुछ दुग्ध एवं एकाध साधारण फल पर संतोष करे। कुल मिलाकर साधारण से चतुर्थांश ही भोजन करे और यथासाध्य द्रव पदार्थ ही पान करे। जिस देश में मनुष्य उत्पन्न हुआ हो एवं जहाँ रहता हो वहाँ के साधारण फल आदि उसे लाभकर होंगे, क्योंकि प्रकृति ने उन्हें उसी के लिये बनाया है। प्रत्येक मनुष्य के लिये उसकी प्रकृति के अनुसार अनेकानेक पदार्थ हानिकर एवं लाभकर होते हैं। उसको अपनी रुचि को प्रधानता न देकर लाभ ही की ओर ध्यान देना चाहिए, नहीं तो खाने के लिये जीने की कहावत चरितार्थ हो जायगी।

रसोईघर, पाचनविधि, एवं भोजन–स्थान पर सदैव ध्यान रखना चाहिए। हमारे एक मुसलमान मित्र कहते थे कि मुसलमानी खाना हिन्दुओं की भाँति स्वच्छ सुथरा बनाकर अंग्रेजों की तरह उसे भोजन करे। वे हिन्दुओं की भोजन बनाने की रीति पसन्द करते थे तथा अंग्रेजों की खाने की। इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दू भोजन बहुत सफाई से बनाते हैं, अंग्रेजों की खाने की विधि बड़ी समुज्जवल है तथा मुसलमानी भोजन बड़ा सुस्वादु होता है। फिर भी मुसलमानी भोजन पचने में बहुत कड़ा होता है और अंग्रेजी खाना स्वाद में भद्दा होता है। इसलिये अंग्रेजी भोजन को कुछ हिन्दुस्तानी स्वाद देकर बनाने में उपरोक्त कथन चरितार्थ हो सकता है। स्वास्थ्य के लिये यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि भोजन शरीर यात्रा का साधनमात्र है न कि स्वयं कोई लक्ष्य। जो लोग स्वाद का लालच छोड़कर केवल जीने के लिये खाते हैं वे वास्तव में सुधर्म पालन करते हैं।

भोजन की विधि यह है कि इसमें उच्छृंखलता तनिक भी न हो; अर्थात् नियत समय पर सदैव भोजन किया जाय। यदि थोड़ा–थोड़ा भोजन कई बार किया जाय तो अच्छा हो, किन्तु उसमें दृढ़ता आवश्यक है; यह नहीं कि किसी दिन चार बार खाय और किसी दिन दो ही बार। नियत समय के अतिरिक्त यथासाध्य कुछ भी न खावे। भोजन करने के समय जलपान बहुत कम करना चाहिए। प्रत्येक ग्रास को कम से कम बत्तीस बार चुघलाकर खावे और खाने में शीघ्रता कभी न करे। नमकीन पदार्थों से भोजन आरम्भ करे और मीठे से भोजनांत। कहा भी है कि ''मधुरेण समापयेत्''। फल सब पदार्थों के अन्त में खाना चाहिए। यथासाध्य नित्य कोई न कोई फल अवश्य खाना चाहिए। फसली फलों पर सबको ध्यान देना उचित है। भोजन इस प्रकार करना चाहिए कि चूर्ण आदि की आवश्यकता न पड़े। मादक पदार्थों का सेवन हर प्रकार से हानिकारक एवं तिरस्करणीय है। भोजन में वैविध्य का होना परमावश्यक है। नित्य प्रति एक ही प्रकार का भोजन पूर्ण लाभ नहीं पहुँचाता।

–(शेष अगले अंक में)

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

ब्रह्मचर्य–विज्ञान

लेखकः–जगन्नारायणदेव शर्मा

ब्रह्मचर्य–सूक्त

(21)

पार्थिवा दिव्याः पशव आरण्या ग्राम्याश्चये।
अपक्षा पक्षिणश्च ये ते जाता ब्रह्मचारिणः।।

पृथिवी पर चलने वाले, आकाश में उड़ने वाले तथा वन और ग्राम के पशु–पक्षी, सब ब्रह्मचारी हैं।

स्थलचर, नभचर, वन और ग्राम में रहने वाले जितने पशु–पक्षी हैं, सभी अपने ब्रह्मचर्य की रक्षा करते हैं। इनमें परमेश्वर ने एक शक्ति ऐसी दी है, जिससे कि ये ब्रह्मचर्य के महत्व को अपने हृदय में अनुभव करते हैं। इनमें ब्रह्मचर्य–रक्षा की स्वाभाविक परिपाटी होती है। इनसे मनुष्यों को भी यही शिक्षा लेनी चाहिए।

(22)

पृथक् सर्वे प्रजापत्याः प्राणानात्मसु विभ्रति।
तान्त्सर्वान् ब्रह्म रक्षति ब्रह्मचारिण्या भृतम्।।

(1) प्रजापति से सब उत्पन्न हुये हैं। सब पृथक–पृथक् अपने में प्राण रखते हैं। और (2) ब्रह्मचारी में धारण किया हुआ ब्रह्म, उन सबकी रक्षा करता है।

(1) उस पूज्य परम पिता परमात्मा से सभी जीवों तथा पदार्थों की उत्पत्ति हुई है। उन सबमें अलग–अलग जीवन–शक्ति विद्यमान है।

(2) और ब्रह्मचारी जिस ब्रह्म को अपने आत्मा में अधिष्ठित करता है, वह उन सबको सुरक्षित रखता है।

यह सारी सृष्टि परमेश्वर की ही बनाई हुई है। नाम और रूप के भेद से सब वस्तुयें पृथक–पृथक् सत्ता में जान पड़ती है। ब्रह्मचारी इसीलिये अपने व्रत का पालन करता है कि वह श्रेष्ठ ज्ञान प्राप्त कर विश्वभर का कल्याण करने में समर्थ हो। ब्रह्मचर्य के पालन से ही संसार की रक्षा होती है।

(23)

देवानामेतत् परिषूतमनभ्यारूढं चरति रोचमानम्।
तस्माज्जातं ब्राह्मणं प्रह्म ज्येष्ठं देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम्।।

www.thearyasamaj.org

(1) देवों का यह अत्यन्त गौरवान्वित तथा उत्साह-वर्द्धक तेज है। (2) उससे सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण की उत्पत्ति होती है। और (3) देव लोग अमृत के साथ निवास करते हैं।

(1) यह विद्वानों का गूढ़ तथा साहस बढ़ाने वाला तेज उन्नति करता है।

(2) उस तेजोबल से उनमें परमोत्तम ब्रह्मज्ञान की वृद्धि होती है।

(3) और सब सद्गुण इस अमृत (न मरने वाला पदार्थ) के संग में रहते हैं।

ब्रह्मचर्य ही विद्वान् लोगों का उच्च तथा उत्साह-दायक ध्येय है। वे इसका पूर्ण रूप से पालन करते हैं। इसका सदभाव उनको उन्नत बनाता है। इससे उनके हृदय में सबसे उत्तम ब्रह्मज्ञान का उदय होता है, और ब्रह्मज्ञान के प्राप्त होने से उनके अन्तर्गत सभी अच्छे गुण अपने आप स्थायी रूप से रहने लगते हैं। अर्थात् उनके सदभ्यस्त विचार स्खलित नहीं होने पाते।

(24)

ब्रह्मचारी ब्रह्म भ्राजद् विभर्ति तस्मिन्देवा अधि विश्वे समोताः।
प्राणपानौ जनयन्नाद्व्यानं वाचं मनो हृदयं ब्रह्म मेधाम्।।

(1) ब्रह्मचारी चमकीले ब्रह्म को भरता है। (2) उसमें सब देवलोग रहते हैं और (3) प्राण, अपान, व्यान, वाचा, मन, ज्ञान और मेधा उत्पन्न करता है।

(1) ब्रह्मचारी उत्कृष्ट ब्रह्मचर्य का पालन करता है।

(2) इससे सभी संसार के सद्गुण उसमें एकत्र हो जाते हैं।

(3) और यह अपने अनुष्ठान से प्राणों, वाचा-शक्ति, मन, हृदय, ज्ञान और बुद्धि को पुष्ट करता है।

वीर्य ही परमेश्वर का तात्विक रूप है! ब्रह्मचारी उसे अपने शरीर में धारण करता है। इस चर्या से उसके सभी दिव्य गुणों की उन्नति होती है। इस प्रकार वह अपने तप के प्रभाव से समस्त शारीरिक और मानसिक शक्तियों को प्रबल और संयमित बनाता है।

(25)

चक्षुः श्रोत्रं अस्मासु धेह्यन्नं रेतो लोहित मुदरम्।।

हम लोगों को चक्षु, श्रोत्र, यश, अन्न, रेतस, लोहित और उदर दो।

हे ब्रह्मचारी! हमको सुदृष्टि, सुश्रवण, कीर्ति, प्राण, वीर्य, रक्त और पालन-पोषण करने की शक्ति दो। ब्रह्मचर्य के अधीन विश्व की बाह्य तथा आभ्यन्तर सभी शक्तियाँ होती हैं। परमात्मा भी ब्रह्मचारी है और ब्रह्मचारी भी परमात्म रूप है। इसीलिये उससे इन सब दिव्य शक्तियों की याचना की गई है। हे परमात्मा के अंशभूत ब्रह्मचारी! तुम जनता में सुख और शान्ति के बढ़ाने के लिये नाना प्रकार के सदाचार-सम्बन्धी उपदेश करो, तथा ऐसे यत्न बताओ, जिनसे कि संसार के अमंगल-कारी अवगुणों का नाश हो!

www.thearyasamaj.org

(26)

तानि कल्पद् ब्रह्मचारी सलिलस्य पृष्ठे तपोऽतिष्ठत्तप्यमानः समुद्रे।
स स्नातो बभ्रुः पिंगलः पृथिव्यां बहु रोचते।।

(1) ब्रह्मचारी उन सबों का उपक्रम करता है। (2) वह समुद्र में तप्त होने वाला जल के पीठ पर तप करता है। और (3) वह स्नान करके अत्यन्त तेज वाला होकर, पृथिवी में अच्छा माना जाता है।

(1) ब्रह्मचारी ऊपर कहे गये, उन सब सद्गुणों और विश्वसुधार के उपदेशों की योजना करता है।

(2) वह ज्ञान-रूपी सागर में अपने को तपाकर, सुख रूपी जल के तीर पर अपने व्रत का अनुष्ठान करने लगता है।

(3) और वह तेजस्वी स्नातक बनकर संसार में अपने सदुपदेशों से सम्मानित होता है।

ब्रह्मचारी आचार्य के समीप रहकर, विद्याध्ययन से नाना प्रकार की शारीरिक और मानसिक शिक्षायें प्राप्त करता है। वह अत्यन्त परिश्रम से ज्ञानार्जन करके सुख के समीप पहुँचता है। वह अपने को योग्य बनाकर अपनी परम श्रेष्ठता, योग्यता और गौरव-गरिमा से संसार में शोभित होता है। वह जनता का हित करता है, और उसकी जनता उचित पूजा करती है।

वस्तुतः वीर्य-रक्षण से ही आत्मिक शक्तियाँ विकसित हो सकती हैं। अवीर्यवान पुरुष को कभी जीवन में सफलता नहीं मिलती। जो अपना कल्याण चाहने वाले पुरुष हैं, उन्हें इस वैदिक सूक्त की शिक्षाओं पर पूर्ण श्रद्धा और विश्वास रखना चाहिये। यदि वे उनके अनुकूल चलने का प्रयत्न करेंगे, तो उनके जीवन में सुख ही सुख दिखलाई पड़ेगा। वेद भगवान् का कथन कभी असत्य नहीं हो सकता। इसे निश्चय समझो! (अथर्ववेद 11, 5, 10-26) ❁❁❁

पृष्ठ संख्या 4 का शेष-

है। स्त्री को तीन दिन सम्पूर्ण अपामार्ग के पौधे को पानी में रात-भर रखकर उसका पिलाना उपयोगी होता है, पुरुष का रोग कैसा है इसके अनुसार निर्णय होता है। यहाँ जो नुस्खे लिखे गये हैं वे एक कुशल वैद्य के बताये हुए हैं। प्रयोग के अनुभव से इनमें परिवर्तन या परिवर्धन भी हो सकता है।

अन्त में वैद्य विश्वास के साथ कहता है कि इन सब रोगों को तथा इनसे भिन्न भी अनेक रोगों को हम अपामार्ग द्वारा शरीर से मिटा सकते हैं। 'अप-मृज्' धातु का अर्थ है रोग दूर करके शरीर को शुद्ध कर देना, जिससे रोग पुनः वहाँ घर न कर सके। आइये, ऐसी बहुमूल्य ओषधि के प्रयोग को हम सीखें तथा रोगियों को इससे स्वस्थ करके रोगों की न्यूनता करने का श्रेय प्राप्त करें। ❁❁❁

पाठकों से नम्र निवेदन

'**तपोभूमि**' मासिक पत्रिका के उन पाठकों से निवेदन है जिन्होंने वर्ष 2015 का शुल्क अभी तक जमा नहीं कराया है वे वर्ष 2016 के वार्षिक शुल्क के साथ शीघ्र ही '**सत्य प्रकाशन**' कार्यालय को जमा करायें ताकि पत्रिका व विशेषांक सुचारू रूप से आपको प्राप्त होते रहें। इस वर्ष का विशेषांक "**भारत और मूर्तिपूजा**" छपकर तैयार हो रहा है बहुत जल्दी ही आपके हाथों में होगा। **आप यथाशीघ्र बकाया शुल्क भिजवायें।** **-व्यवस्थापक तपोभूमि मासिक**

सच्चे सुख का साधन

लेखकः- दयाचन्द्र गोयलीय

संसार में जितनी लोगों को सुख की इच्छा है उतनी ही सुख की कमी है। कितने ही लोगों को धन की इच्छा है और उनका विश्वास है कि धन की प्राप्ति से सुख की प्राप्ति होगी। कितने ही धनवान् ऐसे हैं कि जिन्हें यद्यपि सर्व प्रकार के सुख साधन प्राप्त हैं, तथापि वे इस कारण से दुःखी हैं कि उनके पास कोई काम करने को नहीं है। वे रात दिन पलँग पर पड़े रहते हैं और इसी बात की चिंता में रहते हैं कि हाय! हमारे पास कोई काम करने को नहीं है। इस अपेक्षा वे बहुत से निर्धन मनुष्यों से भी गए बीते हैं। यदि हम इस प्रकार के प्रश्नों पर विचार करें तो इससे हम को इस महत्वपूर्ण सिद्धांत का ज्ञान हो जायगा कि सुख बाह्य वस्तुओं की प्राप्ति में नहीं है और न दुःख उनके अभाव में है, कारण कि यदि ऐसा होता तो हम निर्धन मनुष्यों को सदा दुःख में देखते और धनवानों को सुख में, परन्तु ऐसा नहीं है। कभी-कभी तो सर्वथा इसके विपरीत देखने में आता है। कितने ही अभागे मनुष्य मैंने ऐसे देखे हैं कि जिनके पास यद्यपि धन सम्पदा की बाहुल्यता है तथापि दुःखी हैं और कितने ही भाग्यवान् मनुष्य ऐसे भी देखने में आए हैं कि जो यद्यपि अपना खर्च भी मुश्किल से चलाते हैं तथापि सदैव सुखी और प्रसन्न रहते हैं। कितने ही लोगों का जिन्होंने धन संचय किया है यह कथन है कि धन को हमने केवल अपने ही लाभ के लिये व्यय किया और उससे अपने को ही लाभ पहुँचाया, इस कारण हमारे जीवन का आनन्द जाता रहा और अब हम इतने प्रसन्न नहीं है जितने कि हम निर्धनता की अवस्था में होते।

अतएव अब प्रश्न यह है कि सुख क्या वस्तु है और वह किस प्रकार प्राप्त हो सकता है। क्या वह कोई क्षणिक और काल्पनिक वस्तु है और दुःख स्थाई और वास्तविक है?

इस प्रश्न पर पूर्ण रूप से विचार करने से ज्ञात होता है कि जिन लोगों ने ज्ञान मार्ग को ग्रहण कर लिया है, उनके अतिरिक्त जन साधारण का यह विश्वास है कि सुख इच्छाओं की पूर्ति में है। यह विश्वास प्रायः अज्ञानता के कारण उत्पन्न होता है और स्वार्थपरता के विचारों से निरन्तर बढ़ता रहता है। यही विश्वास संसार के दुःखों का मूल है। इच्छा से यहाँ पर मेरा तात्पर्य केवल विषय-वासना से नहीं है, किन्तु इसका सम्बन्ध उच्च आध्यात्मिक साम्राज्य से भी है कि जहाँ पर अधिक प्रबल, सूक्ष्म और गुप्त रूप से भीतर ही भीतर नष्ट करनेवाली और हानि पहुँचाने वाली इच्छाएँ, सभ्य और शिक्षित पुरुषों को अपना दास बना लेती हैं और उनको आत्मा की उस सुन्दरता और पवित्रता से वंचित कर देती हैं कि जिसका प्रकाश हर्ष और आनन्द का कारण है।

बहुत से मनुष्य इस बात को स्वीकार करेंगे कि संसार में जितने भी दुःख हैं, उन सबका कारण स्वार्थ है, परन्तु उन्हें यह आत्मघाती भ्रम हो रहा है कि यह स्वार्थ उनका नहीं है किन्तु दूसरों का है। जब तुम इस बात को स्वीकार करने लगोगे कि तुम्हारे दुःख का कारण तुम्हारा ही स्वार्थ है, तब तक स्वर्ग के द्वार से बहुत दूर नहीं रहोगे, परन्तु जब तक तुम्हें यह विश्वस है कि दूसरों के स्वार्थ के कारण तुम्हें दुःख उठाना पड़ रहा है, तब तक तुम अपने ही बनाए हुए नरकागार में पड़े रहोगे।

सच्चे सुख की अवस्था वह अवस्था है कि जिसे आनन्द और शांति कहते हैं और जिसमें किसी प्रकार

www.thearyasamaj.org

की इच्छा नहीं होती। इच्छाओं की पूर्ति से जो संतोष वा सुख होता है वह क्षणिक और काल्पनिक होता है और उससे इच्छा की पूर्ति की और अधिक चाह होती है। समुद्र के समान इच्छा की कोई थाह या सीमा नहीं होती। जितनी हम उसकी पूर्ति करते जाते हैं उतनी ही वह अधिक बढ़ती जाती है। इच्छा अपने सेवकों से सदा सेवा चाहती रहती है। उसकी कभी तृप्ति नहीं होती। यहाँ तक कि शारीरिक व्याधियाँ और मानसिक वेदनाएँ उनको आ दबाती हैं और वे दु:ख और विपत्ति की पवित्र करने वाली अग्नि में जा पड़ते हैं। इच्छा एक नरकागार है जिसमें सर्व प्रकार के दु:ख और कष्ट आकर जमा हो गए हैं। इच्छाओं के त्याग करने से ही स्वर्ग की प्राप्ति होती है और वहाँ के यात्रियों को सर्व प्रकार के सुख उपलब्ध हैं।

स्वर्ग और नरक अंतरंग अवस्थाएँ हैं। यदि तुम स्वार्थ-साधन में लगोगे और इन्द्रियों के दास बने रहोगे, तो तुम नरक में गिरोगे, परन्तु यदि तुम स्वार्थ को त्याग कर ज्ञान की उस अवस्था को प्राप्त करोगे कि जिसमें मन और इन्द्रियों को बिलकुल वश में कर लिया जाता है और कषाय और वासना सर्वथा मन्द हो जाती हैं तो तुम स्वर्ग में प्रवेश करोगे। स्वार्थ में मनुष्य अन्धा हो जाता है। उसमें विचार और विवेक बिलकुल नहीं रहता। उसे वस्तु का यथार्थ ज्ञान भी नहीं होता। इसीलिये वह सदैव दु:ख और विपत्ति में ग्रसित रहता है। सम्यक् दर्शन, ईश्वरीय अवस्था से है। जितना तुम इस ईश्वरीय ज्ञान को समझ सकोगे उतना ही तुम्हें इस बात का बोध हो जाएगा कि यथार्थ में सुख किसका नाम है। जब तक तुम स्वार्थ के वशीभूत हुए अपनी ही इच्छाओं की पूर्ति करने में लगे रहोगे तब तक तुम सुख से वंचित रहोगे और अपने लिये दु:ख और विपत्ति के बीज बोते रहोगे। परन्तु जितना तुम दूसरों की सेवा करने और उनको लाभ पहुँचाने के उद्योग में लगोगे, उतना ही तम्हें सुख मिलेगा और तुम हर्ष और आनन्द के फल प्राप्त करोगे।

यदि तुम स्वार्थ के वश में रहोगे तो दु:ख उठाओगे, परन्तु यदि स्वार्थ को त्याग दोगे, तो शांति प्राप्त करोगे। स्वार्थ से प्रत्येक वस्तु की इच्छा करने से केवल हर्ष और आनन्द का ही नाश नहीं होता, किन्तु हर्ष और आनन्द के साधन भी नष्ट हो जाते हैं। देखो पेटू और लालची आदमी शुरू में किस प्रकार अपनी मरी हुई भूख को तेज करने के लिये नई-नई मजेदार चीजों की तलाश में रहता है, परन्तु पीछे से कैसा बोझल और बीमार हो जाता है कि उसे कोई चीज भी अच्छी नहीं लगती। इसके विपरीत जिस आदमी ने अपनी भूख को अपने वश में कर लिया है और जो मजेदार चीजों की तलाश में तो क्या रहता उनका विचार तक भी नहीं करता है, वह सादा भोजन करके खुश होता है। जो लोग स्वार्थ दृष्टि से देखकर यह विचार करते हैं कि सर्वोत्तम सुख इच्छाओं की पूर्ति में है, जब उन्हें उस सुख की प्राप्ति हो जाती है तो मालूम होता है वह सुख नहीं किन्तु सुखाभास है और दु:ख का पंजर है। वास्तव में यह कथन सत्य है कि जो मनुष्य स्वार्थ-साधन में लिप्त है उसका जीवन नष्ट हो जाएगा, किन्तु जो मनुष्य दूसरों की सेवा करने में तन्मय हो जाता है और अपने आपको बिलकुल भुला देता है, यथार्थ में उसे ही जीवन का आनन्द प्राप्त होता है। स्थाई सुख तुम्हें उस समय प्राप्त होगा कि जब तुम स्वार्थांध होकर किसी वस्तु की इच्छा करनी छोड़ दोगे और नि:स्वार्थ भाव को अपने मन में स्थान दोगे। जब तुम इस क्षणिक और विनाशीक वस्तु को सर्वथा भूल जाओगे कि जो तुम्हें इतनी प्यारी है और जो एक दिन तुम से अवश्य छिन जाएगी, चाहे तुम उसे प्यार करो या न करो, तब तुम्हें ज्ञात होगा कि जिस चीज के छोड़ने में तुम्हें हानि मालूम होती थी उसका छोड़ना तुम्हारे लिये बड़ा लाभदायक हुआ। लाभ की इच्छा से किसी वस्तु का त्याग करना, इससे बढ़कर कोई धोका नहीं है और न इससे बढ़कर कोई दु:ख या विपत्ति का कारण है, परन्तु किसी वस्तु का त्याग करना और स्वयं दु:ख और कष्ट उठाना, इसका नाम वास्तव

www.thearyasamaj.org

में जीवन का मार्ग है।

जो चीजें स्वयमेव नष्ट हो जानेवाली हैं, क्या यह सम्भव है कि उनमें मन लगाकर तुम वास्तविक सुख प्राप्त कर सकते हो? कदापि नहीं। वास्तविक सुख तभी प्राप्त हो सकता है कि जब तुम उन वस्तुओं में अपना मन लगाओ कि जो नित्य और स्थाई हैं और कभी नष्ट नहीं होंगी। अतएव तुम्हें चाहिये कि क्षणिक और विनाशीक वस्तुओं से अपने मन को हटा लो और उनकी कभी भूलकर भी इच्छा न करो। उस समय तुम्हें ब्रह्मज्ञान हो जाएगा। जितना तुम स्वार्थ को छोड़ते जाओगे उतना ही तुम में प्रेम, पवित्रता, निःस्वार्थता, जीवमात्र के प्रति मैत्री भाव पैदा होता जाएगा और इसी प्रकार उन्नति करते–करते तुम ब्रह्मज्ञान में लीन हो जाओगे। उस समय जो तुम्हें सुख होगा वह नित्य और स्थाई होगा जो कभी नष्ट नहीं होगा।

जिस मनुष्य के हृदय ने दूसरों के साथ प्रेम करने में और उन्हें लाभ पहुँचाने में अपने आप को बिलकुल भुला दिया है उसे केवल उच्चकोटि का सुख ही नहीं मिला किन्तु उसने नित्य और स्थिर जगत् में प्रवेश कर लिया है कारण कि उसे ब्रह्मज्ञान और ईश्वरानुभव हो गया है। अपने जीवन पर एक दृष्टि डालो। तुम्हें ज्ञात हो जायगा कि तुम्हारे लिये सबसे अधिक सुख के वे समय थे कि जिनमें तुमने किसी के लिये दया के शब्द अपने मुख से निकाले हों, अथवा परोपकार के कार्य किये हों अथवा दूसरों के हितार्थ अपने स्वार्थ की आहुति दी हो।

आत्मिक दृष्टि से सुख और समता पर्यायवाची शब्द हैं। समता ईश्वरीय नियम का एक रूप है जिसका आत्मिक प्रकाश प्रेम है। स्वार्थ घृणित और निन्दित है। स्वार्थी मनुष्य ईश्वरीय नियम के प्रतिकूल चलता है। जितना हम स्वार्थ का त्याग करते हैं और सार्वप्रेम का अनुभव करते हैं, उतना ही हम ईश्वरीय गुणों का अनुकरण करते हैं। इसी का नाम सच्चा सुख है।

संसार में सर्वत्र स्त्री पुरुष सुख की जोह में अंधाधुंध मारे मारे फिरते हैं, परन्तु उन्हें कहीं भी सुख की प्राप्ति नहीं होती वास्तव में उस समय तक सुख की प्रति होना नितांत असम्भव है कि जब तक वे इस बात का अनुभव न करेंगे कि सुख उनके भीतर चहुं ओर विद्यमान है। संसार में कोई भी ऐसे स्थान नहीं हैं कि जहाँ सुख न हो। बात केवल इतनी ही है कि लोग स्वार्थ के वशीभूत होकर उसको ढूँढ़ते हैं, इसीलिये वह उन्हें नहीं मिल सकता और वे उससे वंचित रहते हैं।

देखिये, एक कवि ने सच्चे सुख का रहस्य निम्नलिखित शब्दों में कैसी सुन्दरता से वर्णन किया है।

"मैं सुख को प्राप्त करने के लिये बलूत के ऊँचे–ऊँचे पेड़ों और लहलहाती हुई इश्क पेचां के पास से निकलता हुआ उसके पीछे पीछे दौड़ा परन्तु मैं उसे पकड़ न सका। वह तेजी से निकल गया। मैंने पहाड़ों और घाटियों पर होकर खेतों और बगीचों में से निकल कर हरे भरे मैदानों में उसका पीछा किया। जोरों से बहती हुई नदी को शीघ्रता से पार करके मैं पहाड़ों के ऊँचे ऊँचे शिखरों पर चढ़ गया। मैं सर्वत्र जल थल में घूमा, परन्तु सुख मेरे हाथ नहीं आया। वह सदा मुझसे दूर रहा। जब मैं चलता चलता थक गया और बेसुध हो गया तब मैं लाचार होकर उसका पीछा करना छोड़ दिया और नदी के एक सूखे किनारे पर जरा दम लेने के लिये बैठ गया। इतने में एक मनुष्य मेरे पास आया और उसने मुझसे कुछ खाने को माँगा। उसे आए हुए देर नहीं हुई थी कि एक दूसरा मनुष्य आ पहुँचा और उसने कुछ भीख माँगी। मैंने भूखे को रोटी और माँगने वाले को कुछ पैसे दिये। इन दोनों मनुष्यों के जाते ही दो मनुष्य और आ पहुँचे। एक प्रेम और सहानुभूति का इच्छुक था और दूसरा आराम का। मैंने दोनों का हृदय से स्वागत किया और दोनों की आवश्यकताओं की यथाशक्ति पूर्ति

www.thearyasamaj.org

की। इतने में ही क्या देखता हूँ कि सच्चा और उच्चकोटि का सुख ईश्वरीय रूप में स्वयमेव मेरे सामने आकर खड़ा हो गया और धीरे से कहने लगा कि मैं तेरा दास और किंकर हूँ।"

उक्त शब्दों से पता लगता है कि सच्चा सुख क्या वस्तु है और वह किस प्रकार प्राप्त होता है। अपने क्षणिक और काल्पनिक सुख की आहुति दे दो, फिर तुम नित्य और स्थाई सुख को प्राप्त कर लोगे। उस परिमित और संकुचित स्वार्थ को त्याग दो जो सम्पूर्ण वस्तुओं को अपने ही लाभ के लिये चाहता है। फिर तुम स्वर्गलोक में देवताओं के पास जा विराजोगे और तुम्हारे अंग-अंग में सार्वप्रेम का गुण विकसित हो जाएगा। दूसरों का दु:ख दूर करने में और उन्हें लाभ पहुंचाने में अपने आप को बिलकुल भुला दो, फिर तुम्हें सम्पूर्ण दु:खों से छुटकारा मिल जाएगा। एक विद्वान् का कथन है कि मैंने तीन पग में स्वर्गलोक में प्रवेश किया। पहला पग सद्विचार था, दूसरा पग सुवचन और तीसरा सच्चरित्र। इसी मार्ग का अनुकरण करके तुम भी स्वर्ग में प्रवेश कर सकते हो। यह स्वर्ग कहीं और नहीं है। यहीं पर मौजूद है परन्तु उन्हीं लोगों को मिलता है जो नि:स्वार्थ होकर काम करते हैं और वही लोग उसको जान सकते हैं जिनके मन शुद्ध हैं।

यदि तुमने इस अपरिमित सुख को प्राप्त नहीं किया है तो तुम इसे इस प्रकार प्राप्त कर सकते हो कि सदा अपने सामने नि:स्वार्थ प्रेम का उच्च आदर्श रक्खो और उसको प्राप्त करने की आकांक्षा करते रहो। इस प्रकार की आकांक्षा उच्च आकांक्षा है। इसमें आत्मा ईश्वर की ओर आकर्षित होती है जहाँ उसको नित्य और स्थाई सुख की प्राप्ति होती है। इस प्रकार की उच्च आकांक्षा से वासना की नाशक शक्तियाँ ईश्वरीय स्थाई शक्ति में परिवर्तित हो जाती हैं। उच्च आकांक्षा करना मानो इच्छा और वासना के गोरख- धंधों से निकल जाना है।

जितना तुम स्वार्थपरता को छोड़ोगे और जितना तुम एक एक करके लोभ की जंजीरों को तोड़ोगे उतना ही तुम्हें त्याग के आनन्द का अनुभव होगा। उसी समय तुम्हें स्वार्थपरता और कृपणता के दु:खों का पता लगेगा। त्याग करने से यह तात्पर्य है कि दूसरों की तन मन धन से सेवा करना, उनसे प्रेम और सहानुभूति रखना और उन्हें अपने ज्ञान से लाभ पहुँचाना। जब तुम इस बात को अच्छी तरह से समझ जाओगे तब तुम्हें ज्ञात होगा कि लेने की अपेक्षा देना अधिक श्रेष्ठ है। परन्तु स्मरण रहे, देना मन से होना चाहिये। उसमें स्वार्थ की तनिक भी गंध न हो और बदले की इच्छा हो। जो लोग पवित्र और नि:स्वार्थ प्रेम से कोई वस्तु किसी को देते हैं, उनको सदैव सुख की प्राप्ति होती है। यदि देने के बाद तुम्हारे मन में यह विचार हुआ कि लेने वाले ने तुम्हें धन्यवाद नहीं दिया और न तुम्हारी प्रशंसा की अथवा तुम्हारा नाम समचार पत्रों में दातारों की सूची में नहीं छपा तो जान लो कि तुमने केवल नाम की इच्छा से लोगों को दिखलाने के लिये और प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिये दिया था, पवित्र और नि:स्वार्थ प्रेम के कारण नहीं दिया था। तुमने केवल इस इच्छा से दिया था कि उसके बदले में तुम्हें कुछ मिले और इसका नाम देना नहीं किन्तु लेना है। यह दान नहीं है किन्तु व्यापार है। दान नि:स्वार्थ होकर देना चाहिये। उसके बदले में कुछ मिले इसका विचार भी मन में नहीं आना चाहिये।

दूसरों की भलाई में अपने आपको सर्वथा भुला दो। तुम्हारे कामों में स्वार्थ की गंध भी नहीं होनी चाहिये। यही सच्चे सुख का रहस्य है। इसी से अपरिमित सुख की प्राप्ति होती है। स्वार्थ से सदैव बचते रहो और इन्द्रिय-निग्रह के पाठ को दृढ़ता के साथ सीखते रहो। इससे तुम उस अपरिमित सुख और असीम आनन्द को प्राप्त कर सकते हो, कि जिसका कभी नाश नहीं होगा। ❁❁❁

www.thearyasamaj.org

मधुमास सौरभ

रचयिताः ओंकारसिंह विभाकर, उमरा सुल्तानपुर (उ० प्र०)

(1)

दिनमुख मुख मुसकान मन्द ओठ लाल,
त्रिविधि पवन निज संग लिये आयो है।
भनत 'विभाकर' शरीर पुलकायमान,
हंस पिचकारी दिन हाथ में सुहायो है।
दीख कै अरूण पिचकारी रश्मि रंग भरी,
ग्रह–गण निज रूप व्योम में छिपायो है।
रंग भय देखि करि छिपते छपाकर को,
भागो नहीं तारापति खग गुहरायो है॥

(2)

छूटति फुहारै रंग, भीग गया धरा अंग,
दशो दिशि रंग रंग, रंग ही झरत है।
भनत 'विभाकर' विटप वृन्द पड़ा रंग,
होकर प्रफुल्लित विहंगम उड़त है।
श्वेत पट ओढ़ि नदी–नाले–ताल मौन रहे,
दिन दौरि–दौरि उन्हें रंग में रंगत है।
हंस पिचकारी से प्रवाह रंग ऐसा बहा,
दिखलायी धरा सुर लोक सी परत है॥

(3)

भृंग वृन्द झूमि–झूमि गुन गीत गावें,
झूमते समीरण सरर–मर गाइके।
भनत 'विभाकर' अबीर उड़ै दशो दिशि,
सैलजा सुवन को सुनायो फाग धाइके।
मण्डल मधुप वहाँ मद पय पान करि,
तुरत पयान कीन्हों फाग लेज गाइके।
गायक समूह दीख विविध कुसुम हँसै,
कहैं और गाओ गीत कण्ठन लगाइ के॥

(4)

आमन के तरु बौर विभूषित,
फाग में मस्त हो होली मनावै।
शीतल – मन्द –सुगन्ध–समीर,
सनेह लगाइ सनेह बढ़ावै।
प्रेम करो निज मातृ–मही सें,
विभाकर कोकिल पाठ पढ़ावै।
जो तनु देत स्वदेश–समाज को,
मातु निगाह बड़प्पन पावै॥

(5)

किन्शुक फूल अगन्ध सुरम्य,
बसन्त के स्वागत में मुसुकाने।
पीत प्रसून किरीट दिये सिर,
पेरा–बरै नहि फूल समाने।
आँचल अन्न भरे अचला विहसै,
सबके दुख–द्वन्द दुराने,
आज 'विभाकर'होली में मस्त,
सुधारस विश्व चराचर छाने॥

❁❁❁

महापुरुषों की जयन्ती		महापुरुषों की पुण्यतिथि	
खुदीराम बोस	3 दिसम्बर	संत ज्ञानेश्वर	1 दिसम्बर
डॉ0 राजेन्द्रप्रसाद	3 दिसम्बर	अरविन्द घोष	5 दिसम्बर
राव तुलाराम	9 दिसम्बर	डॉ0 बाबासाहेब अम्बेडकर	6 दिसम्बर
सी. राज गोपालचारी	10 दिसम्बर	अश्फाक उल्ला खां	12 दिसम्बर
मदनमोहन मालवीय	18 दिसम्बर	रोशनसिंह	12 दिसम्बर
गुरू गोविन्दसिंह	22 दिसम्बर	पं0 रामप्रसाद बिस्मिल	19 दिसम्बर
श्री निवास अयंगर	22 दिसम्बर	स्वामी श्रद्धानन्द	23 दिसम्बर
कन्हैयालाल मुंशी	23 दिसम्बर	विक्रम साराभाई	23 दिसम्बर
शहीद उधमसिंह	26 दिसम्बर	सी. राज गोपालचारी	25 दिसम्बर

4 दिसम्बर	विश्व विकलांग दिवस	12 दिसम्बर	गोवा मुक्ति दिवस
5 दिसम्बर	संविधान दिवस	16 दिसम्बर	विजय दिवस (भारत पाक युद्ध 1971)
7 दिसम्बर	झण्डा दिवस	23 दिसम्बर	किसान दिवस
10 दिसम्बर	मानव अधिकार दिवस	24 दिसम्बर	उपभोक्ता अधिकार दिवस

www.thearyasamaj.org

सन्तान उत्पत्ति के लिये शिक्षा

लेखकः डॉ० गोकुलचन्द नारंग

जब हमको यह ज्ञात हो गया, कि मनुष्य जिस प्रकार की चाहे सन्तान पैदा कर सकता है। एवं हमको भारत माता को बोझस्वरूप निकम्मी सन्तति अथवा ऐसी संतति की आवश्यकता नहीं जो देखने सुनने में सुन्दर, हृष्ट-पुष्ट हो, किन्तु वास्तव में (चाहे माता-पिता के कारण ही) दूषित और दुखदाई हो। इस कारण सन्तति के लिये सबसे प्रथम इस बात की जरूरत है, कि माता-पिता पढ़े-लिखे और योग्य हों। आरोग्य और सपूत पुत्र अथवा पुत्री पैदा करने के लिये शिक्षा की परम आवश्यकता है। शिक्षा दो प्रकार की होती है। प्रथम उत्पत्ति के प्रथम और दूसरी उत्पत्ति के बाद। उत्पत्ति के प्रथम की शिक्षा बाद की शिक्षा से अधिक मूल्यवान और लाभदायक है। इस समय की शिक्षा जीवन पर सबसे अधिक असर करती है। और अच्छा बुरा बनाने के लिये आधार स्वरूप होती है। उत्पत्ति के प्रथम की शिक्षा के भी दो भाग होते हैं।

(1) माता-पिता की पहली योग्यता (2) गर्भ के बाद माता-पिता के आचरण आदि जो संतान के दिल व मस्तक पर असर डाला जाता है। माता-पिता को सन्तान उत्पत्ति करने के लिये तैयार होना चाहिये। उनके अनायास सन्तान उत्पत्ति करने से ही, आज हम इतने बदमाश, रोगी और कर्तव्य परांगमुख जीव देख रहे हैं। तैयारी इस प्रकार होनी चाहिये।

(1) दोनों पूर्ण आरोग्य हों। कोई पैतृक अथवा आधुनिक बीमारी न हो।

(2) माता की कमर पतली न हो।

(3) वह बच्चों को भली प्रकार शिक्षा दे सके, क्रोधी न हो विचारांश स्वच्छ और हार्दिक हों।

(4) माता धार्मिक भाव अधिक रखती हो। पिता कर्तव्य पालक हो। दोनों सच्चे और प्रेमी हों।

(5) पिता में नशा करने की आदत न हो।

(6) माता-पिता आपस में एक दूसरे के प्रेमी हों।

(7) दोनों के विचारों में देशहितैषिता की गंध होनी चाहिये। यह हुई तैयारी। जब माता-पिता इस प्रकार से तैयार हों। तब गर्भ की स्थापना करें। गर्भ स्थापन हो जाने के बाद माता-पिता विषय वासना का तो कहना ही क्या, हंसी-दिल्लगी करना भी त्याग दें। अलहदा रहें। धार्मिक और उच्चभाव हृदय में भरें। दोनों ही और खासकर माता को आरोग्य रखने का उपाय करें। विद्वानों का मत है, कि इसी समय पर सन्तान सुधारी या बिगाड़ी जा सकती है। माता-पिता जिस प्रकार का पुत्र चाहते हों उसी प्रकार के विचार हृदय में मजबूती के साथ स्थिर करें। सर्वदा परमात्मा से विनय करें कि उनका पुत्र इसी प्रकार का हो, कि जिस प्रकार का वह चाहते हैं। गर्भाधान के बाद, उत्पत्ति के प्रथम शिक्षा का दूसरा अंग प्रारम्भ होता है। गर्भ के नौ महीने ही के लिये एक डाक्टर कहते हैं, कि "गुरुओं की सारी शिक्षा, जीवन भर का चरित्र

www.thearyasamaj.org

गठन, सभाओं के उपदेश, इतना कार्य नहीं कर सकते, कि जितना कार्य माता अपने गर्भस्थ पुत्र के लिये इन नौ महीनों में कर सकती है।"

अकबर की मां के सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध है, कि जब अकबर उत्पन्न होने को हुआ, तो एक दिन हुमांयू ने देखा कि बेगम सुई और सुरमे से कुछ बैल बूटे अपने पैरों के तलुवे पर बना रही है। हुमायूं ने हंसकर पूछा। यह क्या कर रही हो। बेगम ने कहा। मैं चाहती हूं, कि ऐसे ही बेल बूंटे मेरे पुत्र के पैरों में हों, जब अकबर पैदा हुआ, तो देखा गया कि वैसे ही बेल बूटे उसके तलुवे पर बने हुये थे।

इसी प्रकार नेपोलियन बोनापार्ट जिस समय गर्भ में था, उस समय उसकी मां को उसके पिता के साथ बहुत दिनों तक युद्ध में रहना पड़ा था। इसका असर यह हुआ कि नैपोलियन ने सारा संसार हिला दिया था।

संतान के ऊपर माता-पिता के कर्मों और विचारों का असर केवल मनुष्यों ही में नहीं, वरन् पशुओं में भी पड़ता है। क्योंकि यह बात प्राकृतिक नियमानुसार है। 'तौरेत' में लिखा है, कि एक दफा हजरत याकूब से कहा गया कि अब की बार जितनी बकरियां चितकबरीं पैदा होंगी, वह सब तुमको, तुम्हारी सेवा के उपलक्ष्य में इनाम दी जायेगी। हजरत याकूब बुद्धिमान थे, उन्होंने जिस जलाशय में बकरियां पानी पीने जाया करती थीं, वहां काले और सफेद (चितकवरे) रंग के डंडे गाढ़ दिये। बहुत दिनों तक इस प्रकार के डंडों को देखते रहने के कारण बकरियों के लगभग सारे बच्चे चितकवरे उत्पन्न हुये। इसी प्रकार से यह साबित हो चुका है, कि माता-पिता के विचार, कर्मों और अध्ययन आदि का असर सन्तान पर पड़ता है।

देखा गया है कि सुन्दरता का ध्यान धरने से सुन्दर, गणित की चर्चा करने से गणतज्ञ, साहित्य देखने से साहित्यसेवी, संसार से उदासीन रहने से वैरागी, धन कमाने की धुन में मस्त रहने से अच्छा व्यापारी, पुत्र पैदा होता है। और बुरी तस्वीर देखने से सुन्दर माता के भी कुरूप पुत्र उत्पन्न होते हैं।

गर्भ के दिनों में मां को हलकी, खून वर्धक और सुस्वाद पदार्थ खाने चाहियें। सामान्य कार्य करना और उत्तम-2 पुस्तकें पढ़ना चाहिये। सर्वदा प्रसन्न बदन रहे, रंज, शोक और शोर से दूर रहें। सर्वदा ईश्वर, पति और धर्म का ध्यान करती रहे। ❁❁❁

'तपोभूमि' मासिक के पाठकों से निवेदन है कि जिन्होंने अपना वार्षिक शुल्क चालू वर्ष या पिछले वर्ष का शुल्क अभी तक नहीं भेजा है। वे शीघ्रातिशीघ्र शुल्क भिजवाने की व्यवस्था करें। वार्षिक शुल्क 150/- एक सौ पचास रूपये तथा पन्द्रह वर्ष हेतु 1500/- एक हजार पाँच सौ रूपये भेजकर पत्रिका का लाभ उठायें।

-धनराशि भेजने हेतु बैंक का नाम व पता एवं खाता संख्या-
इण्डियन ओवरसीज बैंक, *शाखा युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, जयसिंहपुरा, मथुरा I F SC Code- IOBA 0001441 'सत्य प्रकाशन' खाता संख्या- 144101000002341*

वैवाहिक विज्ञापन

वधू चाहिए

किशनकुमार, जन्मतिथि 01/12/1974 खत्री गोत्र, रंग गोरा, वजन 55 किलोग्राम, लम्बाई 5' 4", कपड़े की दुकान, मासिक आय 15 हजार रूपये प्रतिमाह हेतु गृह कार्य में दक्ष वधू चाहिए। सम्पर्क करें-

टीकमचन्द खत्री, बी-18, गुरूनानक नगर, मथुरा (उ0 प्र0) मोबा. 9267260120

आर्य समाज का पद्य साहित्य

लेखकः डॉ० सूर्यदेव

सन् 1875 में आर्यसमाज की स्थापना होने के पश्चात, हिन्दी साहित्य में जो काव्य धारा ब्रज भाषा में राधा कृष्ण प्रेम सम्बन्धी पहले प्रवाहित होती आ रही थी, उसके प्रवाह में कुछ परिवर्तन होना आरम्भ हो गया था और कुछ देश भक्ति, कुछ समाज-सुधार आदि की चर्चा हिन्दी कविता में की जाने लगी थी, जैसा कि भारतेन्दुजी के इस पद्य से स्पष्ट है-

अँगरेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन विदेश चलि जात यहै अति ख्वारी॥
ताहू पै मँहगी काल रोग विस्तारी।
दिन 2 दूने दुख देत ईस हा हा री॥
सबके ऊपर टिक्कस की आफत आई।
हा हा भारत दुर्दशा न देखी जाई॥

परन्तु आर्यसमाज ने अपने सिद्धान्तों के प्रचार की दृष्टि से जो गद्य और पद्य साहित्य रचा उसका प्रभाव भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जैसे हिन्दी लेखकों पर भी पड़ा जो उनकी इस कविता से प्रगट है।

रचि बहु विधि के वाक्य पुरानन माँहि घुसाये।
शैव शाक्त वैष्णव अनेक मत प्रगटि चलाये॥
जाति अनेकन करी नीच और ऊँच बनायो।
खान पान सम्बन्ध सबन सौ बरजि छुड़ायो॥
जन्म पत्र विधि मिले ब्याह नहि होन देत अब।
बालक पन में ब्याह प्रीति बल नास कियो सब॥
वहु देवी देवता भूत और प्रेत पुजाई।
ईश्वर से सब विमुख किये हिन्दू घबराई॥

इस पद्यांश को देखने से प्रतीत होता है कि मानो यह किसी आर्य समाजी प्रचारक ने लिखा है, क्योंकि इसमें उन अनेक सामाजिक बुराइयों का वर्णन आया है जिनका आर्य समाज खण्डन करता है। भारतेन्दु जी की ये रचना सन् 1876 में की गई और स्वामी दयानन्द ने अपना प्रचार और इन बुराइयों का खण्डन का कार्य सन् 1863 में ही आरम्भ कर दिया था। इससे भारतेन्दु जी पर स्वामी दयानन्द और आर्य समाज का प्रभाव अवश्य पड़ा होगा, ऐसा स्पष्ट सिद्ध होता है।

काव्य क्षेत्र में आर्य समाजी प्रचारकों ने सर्वप्रथम अपना कार्य भजनों से आरम्भ किया। सन् 1885 में चौधरी नबलसिंह भजनोपदेशक की लावनियों ने लाहौर में धूम मचा दी। फिर अनेक भजनीक आर्य समाज में तैयार हो गये। साधारण जनता ने भजनीकों का स्वागत किया और उनके भजनों को बड़े चाव से सुना। यद्यपि भजनीकों की रचनाऐं साहित्यिक दृष्टि से उच्चकोटि की नहीं होती थीं और उनमें से कुछ तो केवल तुकबन्दी ही कही जा सकती है, फिर भी उनका प्रभाव जनता पर बहुत अधिक पड़ता था और आर्य समाज के उस प्रारम्भिक काल में जो प्रचार कार्य इन भजनीकों के द्वारा किया गया वह अतीव प्रशंसनीय है। भजनीकों की रचनाओं में साहित्यिकता न सही किन्तु सिद्धान्त प्रियता, ओज और उत्साह उनमें पद पद पर छलकता है। श्री अमीचन्द, पं०

www.thearyasamaj.org

वासुदेव, चौधरी तेजसिंह आदि के भजन लोगों के कानों में वर्षों तक गूंजते रहे थे। इनका प्रभाव सीधा लोगों के हृदयों पर होता था जैसे ....।

"दुखदाई बाल विवाह से भारत कैसे सुधरेगा?" आदि भजनों में बाल विवाह का जोरदार खण्डन है। प्रसिद्ध भजनीक श्री नन्दलाल ने कैसा प्रोत्साहन दिया है-

भारत के बच्चे 2 को हम अर्जुन भीम बना देंगे।
इस देश के बांके वीरों को हम अस्त्र शस्त्र सिखला देंगे॥

आर्य समाज निराकार ईश्वर की उपासना करता है। अतः इस कविता में मूर्तिपूजा का खण्डन करते हुए शिष्ट व्यंग की कैसी सुन्दर झलक है-

अजब हैरान हूँ भगवन् तुम्हें क्यों कर रिझाऊँ मैं।
न कोई वस्तु है ऐसी जिसे सेवा में लाऊँ मैं॥
तुम्हीं हो मूर्ति में व्यापक, तुम्हीं व्यापक हों फूलों में।
भला भगवान को भगवान पर कैसे चढाऊँ मैं॥
लगाना भोग कुछ तुमको यह इक अपमान करना है।
खिलाता है जो सब जग को उसे कैसे खिलाऊँ मैं॥
तुम्हारी ज्योति से रोशन हैं सूरज चाँद अरु तारे।
महा अन्धेर है तुमको अगर दीपक दिखाऊँ मैं॥

नागरी लिपि में उर्दू शब्दों के प्रयोग के साथ भी आर्य समाज के कुँवर सुखलाल आर्य मुसाफिर जैसे भारत प्रसिद्ध भजनोपदेशकों ने लोगों में जोश और उत्साह की रूह फूंक दी, जैसे-

उठाओ ओ3म् का झण्डा, चलो मक्के मदीने को।
मुसलमानों के बस अब होश परेशां होते जाते हैं॥
शजर शुद्धी का सींचा खूने शीरी से "मुसाफिर" ने।
जिसके जेरे साया लाखों शादाँ होते जाते हैं॥

राष्ट्रियता के और देश भक्ति के प्रचार में भी आर्यसमाज के कुंवर सुखलाल जी जैसे भजनोपदेशकों ने कमाल कर दिया जैसे-

नेशन की इमारत कहीं मिसमार न हो जाय।
गुलशन ये कहीं देखना पुरखार न हो जाय॥
देखो तबीबो कहने ही कहने में तुम्हारे,
चलता कहीं जहां से यह बीमार न हो जाय॥

इन उत्साही भजनोपदेशकों के अतिरिक्त आर्यसमाज में अनेक उच्चकोटि के साहित्यिक कवि भी अपनी सुललित साहित्यिक रचनाओं द्वारा समय समय पर हिन्दी काव्य-भंडार को भरते रहे हैं। इन साहित्यिक कवियों ने अधिकतर स्फुट रचनायें विभिन्न विषयों पर अपनी आवश्यकतानुसार की हैं जो मुक्तक काव्य के अन्तर्गत आती हैं जो समय-2 पर विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। आर्य समाज के सुप्रसिद्ध साहित्यिक कवि श्री पं० नाथूराम शर्मा 'शंकर' की रचनायें तो "अनुराग रत्न"-"शंकर सरोज" और "शंकर सर्वस्व" के रूप में उपलब्ध हैं, परन्तु अन्य कवियों ने अपनी रचनायें एक काव्य ग्रंथ के रूप में बहुत कम प्रकाशित की हैं। ईश्वर प्राप्ति के सम्बन्ध में शंकर जी का एक कवित्त देखिये-

योग साधनों से होगा चित्त का निरोध और,
इन्द्रियों के दर्प की कुचाल रुक जायेगी।

www.thearyasamaj.org

ध्यान धारणा के द्वारा सामाधिक धर्म धार,
चेतना भी संयम की ओर झुक जायेगी।
मूढ़ता मिटाय महा मेधा का बढ़ेगा वेग,
तुच्छ लोक लालच की लीला लुक जायेगी।
शंकर के पाय परा विद्या यों मिलेंगे मुक्त,
बन्धन की वासना अविद्या चुक जायेगी॥

इसी प्रकार पं0 प्रकाशचन्द्र जी कविरत्न के एक पद में रहस्यवादी झलक देखिये–

जीवन, जीवन धन पर वारूं।
जो आयें प्रभु मोरे आंगन, नैन नीर से चरन पखारूं॥ 1॥
सरस सनेह सुखद सुमधुर सुधि, एक घड़ी पल छिन न बिसारूं॥ 2॥
प्रभु मुखचन्द्र "प्रकाश" छोड़कर, मैं चकोर किस ओर निहारूं॥ 3॥

श्री पं0 प्रकाशचन्द्र जी कविरत्न (अजमेर) भारत प्रसिद्ध कवि एवं संगीतज्ञ थे जिनके द्वारा रचित भजन एवं कविताओं को आर्य समाज के प्रायः समस्त भजनोपदेशक उत्सवों में अतीव प्रेम से सुनाया करते हैं। उनकी एक कविता प्रस्तुत है–

ईश्वर महिमा पर–

(1)
विविध रंगों के फूल लगते फबीले कैसे,
अलबेली प्रकृति नटी की घनी साड़ी के।
ज्ञान–चक्षु खोल प्रभु–रचना अपार लखो,
हैं नहीं ये कौतुक अचेतन अनाड़ी के॥
बिना घड़ीसाज के न बनती "प्रकाश" घड़ी,
चालक बिना न चलते हैं चक्र गाड़ी के।
बिना बीज वृक्ष, बिना तिली कब तेल होत,
है न विश्व–खेल बिना चतुर खिलाड़ी के॥

(2)
नित्य नव्य भव्य सृष्टि सृजन सतत् होत,
केवल उसी का एक भृकुटि–विलास है।
देव वृन्द, काल विकराल उसकी ही नित,
पावन परम प्रभुता का बना दास है॥
अणु अणु में है वही व्यापक "प्रकाश" प्रिय,
फूल में सुवास जैसे ईख में मिठास है।
अगम, अगोचर, अकाय, अविनाशी–ईश,
दूर है अज्ञानियों से, ज्ञानियों के पास है॥

आर्यों को उद्बोधन देते हुये वे लिखते हैं–

उठो आर्य वीरो! ये आलस्य कैसा?
सँभलने के दिन हैं, सँभलना पड़ेगा।
लगी दौड़ उन्नति की संसार में है,
तुम्हें सबसे आगे निकलना पड़ेगा॥

www.thearyasamaj.org

सकल लोक-उपकारिणी वेद वाणी,
विमल सभ्यता, भारती राष्ट्र के हित,
धधकती चिता बीच जलना पड़ेगा।
तुम्हें घोर विष भी निगलना पड़ेगा॥
दयानन्द ऋषिराज के सार्वभौमिक,
सदुद्देश्य की हो नहीं पूर्ति जिससे।
उन्हीं पार्टियों और दल बन्दियों के,
विकट दल दलों से निकलना पड़ेगा॥
खुले रुप में नाच रंग हो रहे हैं,
यहाँ सांस्कृतिक कार्यक्रम के बहाने।
पतन घोर नैतिक चरित का हो जिससे,
वह प्रोग्राम दूषित बदलना पड़ेगा॥
मृतक राष्ट्र को चेतना दी तुम्हीं ने,
न हो तुच्छ तुम, है महाशक्ति तुम में,
अरे, क्रान्ति के, शान्ति के अग्रदूतों!
तुम्हें आग्रगामी हो चलना पड़ेगा॥
प्रबल युक्ति से, शक्ति से है बचाना,
सकल राष्ट्र को आक्रमणकारियों से।
कृतघ्नी कुटिल, साँप घर में घुसे जो,
प्रथम मुख उन्हीं का कुचलना पड़ेगा॥
कहो! वीर वर नारियों से कि तुम भी,
उठो! देश को शत्रुओं से बचाने।
इन्हीं चूड़ी वाले करों में ले राइफल,
निडर सिंहनी सम मचलना पड़ेगा॥
अगर चाहते हो ''प्रकाशार्य'' भारत,
पुनः विश्व गुरु की करे प्राप्त पदवी।
दयानन्द ऋषि के बताये सुपथ पर,
तुम्हें पूर्ण श्रद्धा से चलना पड़ेगा॥

स्वामी दयानन्द के सम्बन्ध में आर्य समाज के कवियों ने तथा आर्येतर सज्जनों ने भी अनेक उत्तम कवितायें लिखीं। ''शंकर'' जी की एक प्रसिद्ध कविता देखिये–

आनन्द सुधासार दया कर पिला गया।
भारत को दयानन्द दुबारा जिला गया॥
डाला सुधार-वारि बढ़ी बेलि मेल की।
देखो समाज फूल फबीले खिला गया॥
काटि कराल जाल अविद्या अधर्म के।
विद्यावधू को धर्म धनी से मिला गया॥
खोला कहां न पोल ढके ढोंग ढोल की।
संसार के कुपन्थ मतों को हिला गया॥
'शंकर' दिया बुझाय दिवाली को देह का,
कैवल्य के विशाल वदन में बिला गया॥

www.thearyasamaj.org

इसी प्रकार हर्ष की बात है कि श्री नाथूराम शंकर शर्मा जैसे योग्य पिता के योग्य पुत्र "आर्यमित्र" के ख्यातनामा भूतपूर्व सम्पादक कविवर डॉ0 हरिशंकर शर्मा जी ने "मूलशंकर का शंकर विवेक" में 43 हरिगीतिका छन्दों में स्वामी दयानन्द का प्रारम्भिक जीवन का चित्रण किया है। उसका एक छन्द देखिये–

हा हिन्दुओं के ह्रास का कुछ भी न पारावार था।
परदेशियों के धर्म से इस देश का उद्धार था॥
अगणित अछूतों का अनादर देख जो उत्ताप था।
उससे अधिक अपनी दशा पर शोक था सन्ताप था॥

इसी प्रकार डॉ0 सूर्यदेव शर्मा, साहित्यालंकार ने स्वामी जी की गुरू दक्षिणा का दृश्य 11 छन्दों में अंकित किया है। कुछ छन्द देखिये–

अहो प्रिय शिष्य मुदित मतिमान,
अखिल आशा-पंजर के कीर।
अरुणावत् अतुलित आभावान्,
अनूपम आज्ञाकारी वीर॥
दक्षिणा देते हो क्या तात,
थाल में रखकर आधा सेर।
न लौंगें लूँगा, सुन लो बात,
आ रही अन्तस्तल से टेर॥
अहो, ऋषि मुनियों का गुरु ज्ञान,
भुलाया भारत ने भरपूर।
गपोड़े ग्रन्थ गढ़े, गढ़ मान,
उन्हें तुम करदो चकनाचूर॥
दिखा कर वैदिक "सूर्य" प्रकाश,
भगादो निशिचर अबुध उलूक।
अविद्यातम का कर के नाश,
सुपथ दिखला दो अटल अचूक॥

अन्त में शिष्य दयानन्द, गुरु विरजानन्द के सम्मुख प्रतिज्ञा करता है–

"विश्व में कर के वेद प्रचार,
करूं संस्थापित आर्य समाज।
मातृ भू भारत का उद्धार,
आर्य जाति का गौरव राज॥
इसी में अर्पण कर दूँ प्राण,
अगर है दयानन्द मम नाम।
आपकी आशिष से कल्याण,
सफल होगा गुरुवर! यह काम॥"

इसी प्रकार डॉ0 हरिशंकर शर्मा जी द्वारा लिखित "जगज्ज्योति" की अन्तिम पंक्तियां देखिये–

ओ टंकारा की ज्वलित ज्योति! तू कभी नहीं बुझने वाली।
मुझसे जगमग यह जगतीताल, तुझसे भारत गौरव शाली॥
चमक रही दुनियां भर में, तू चमक रही रन में, बन में।
हृदय और निःश्रेयस बन, तू रमी हुई जग जीवन में॥"

www.thearyasamaj.org

इस प्रकार समाज सुधार, बाल विवाह, विधवा दुर्दशा, अनाथ रक्षा, अस्पृश्यता निवारण, देशभक्ति, राष्ट्रीयता आदि अनेक विषयों पर आर्य कवियों ने अपनी अनेक भाव भरित कवितायें प्रस्तुत की हैं। श्री हरिश्चन्द्र देव वर्मा चातक, पं0 प्रकाशचन्द्र कविरत्न, डॉ0 मुंशीराम शर्मा, "सोम", ओंकारनाथ शास्त्री "प्रणव", सावित्रीदेवी प्रभाकर, वागीश्वर विद्यालंकार, धर्मदेव विद्यामार्तण्ड, भारतेन्द्रनाथ साहित्यालंकार आदि अनेक कवियों ने अनेक उत्तम रचनायें लिखी हैं जो विविध विषयों पर हैं। खंडन-मंडन के क्षेत्र में भी आर्य कवि पीछे नहीं रहे हैं। श्री "शंकर" जी की यह प्रसिद्ध रचना देखिये-

"शैल विशाल महीतल फोड़ बढ़े तिन को तुम तोड़ कढ़े हो।
लै लुढ़की जलधार धड़ाधड़ ने धर गोल मटोल गढ़े हो॥
प्राण विहीन कलेवर धार विराज रहे न लिखे न पढ़े हो।
हे जड़देव शिलासुत शंकर, भारत पै करि कोप चढ़े हो॥"

जब सिन्ध सरकार द्वारा 'सत्यार्थ प्रकाश" को जब्त करने का आदेश हुआ तो डॉ0 सूर्यदेव शर्मा को लिखना पड़ा-

कौन शक्ति है जग में जो रवि के प्रकाश को मिटा सके?
कौन शक्ति है जो पर्वत के तुंग शृंग को लिटा सके?
कौन शक्ति है जो सागर के प्रचंड वेग को घटा सके?
कौन शक्ति है जो ऋषि के उस अमर ग्रंथ को हटा सके?

आगे आर्य वीरों को बलिदान के लिये आह्वान करते हुए डॉ0 सूर्यदेव जी शर्मा ने लिखा-

आ गई बलिदान बेला।
बज रही रण दुंदभी है, सज रहा संग्राम मेला॥ 1॥
क्या कहा? यह रण निमन्त्रण सिन्ध की सरकार का है?
या नमूना पाक पाकिस्तान के दरबार का है?
मुस्लिमों के राज का, या अधर्म अत्याचर का है?
या खिलाफत की मदद का सब सिला उपकार है?

कौन, किसका यह झमेला?
आ गई बलिदान बेला॥ 2॥
सत्य पर परदा गिराना कोई इनसे सीख ले।
"चाँद" से "सूरज" दबाना कोई इनसे सीख ले॥
फूंक से पर्वत उड़ाना कोई इनसे सीख ले।
घास में पावक छिपाना कोई इनसे सीख ले॥

तान में है ये तबेला।
आ गई बलिदान बेला॥ 3॥
आर्य वीरों का विभूषण तो सतत् संग्राम ही है।
अनय अत्याचार से लड़ना हमारा काम ही है॥
हमको कभी "सत्यार्थ" बिन जग में नहीं आराम ही है।
धर्म पर बलिदान होने में अमर शुभ नाम ही है॥

वीर डट जाता अकेला।
आ गई बलिदान बेला॥

❁❁❁

www.thearyasamaj.org

॥ ओ३म्॥

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

श्री विरजानन्द ट्रस्ट, वेदमन्दिर–मथुरा में चतुर्वेद पारायण यज्ञ

दिनांक 6 दिसम्बर 2016 से 25 दिसम्बर 2016 तक

सभी धर्मप्रेमी सज्जनों!

परमपिता परमात्मा हम लोगों के माता–पिता के समान है। हम सब उसकी प्रजा हैं इसलिए हम सब पर वह नित्य कृपादृष्टि रखता है। जैसे अपनी सन्तानों के ऊपर माता–पिता सदैव करूणा को धारण करते हैं। वह चाहते हैं हमारी सन्तान सदा सुखी रहे, वैसे ही परमात्मा भी सब जीवों पर कृपादृष्टि सदैव रखता है। बिना ज्ञान के हमारा कल्याण कभी सम्भव नहीं है। इसलिए सृष्टि के आदि में ईश्वर ने अपने ज्ञान ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद का प्रकाश चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा के मन में किया फिर उन्होंने सब भूगोल में वेद विद्या को फैलाया। जिनको पढ़–पढ़ा और सुन–सुना के हमारे पूर्वज ऋषि–मुनियों ने धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की सिद्धि को प्राप्त किया उससे परम ज्ञान प्राप्त करके अपने मानव जीवन को धन्य कर गये। इसी प्रकार सबका जीवन धन्य हो इस परोपकार को ध्यान में रखकर आपके अपने श्री विरजानन्द आर्ष गुरूकुल वेदमन्दिर मथुरा में विगत 6 वर्षों से प्रतिवर्ष चतुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन रखा जाता है। विद्वानों के प्रवचनों से वेद–ज्ञान की प्राप्ति और साथ में यज्ञ में पवित्र सामग्री से वातावरण शुद्धि का उपाय किया जाता है। इस वर्ष भी आयोजन 6 दिसम्बर से 25 दिसम्बर 2016 तक निर्धारित किया है। धार्मिक कार्य सर्वसाधारण के कल्याण की कामना को करके आयोजित किये जाते हैं यदि उनमें सभी सज्जनों का सहयोग न हो तो उनका पूरा होना असम्भव है यदि सम्भव हो भी जाय तो सबका उपकार न होने से निरर्थक भी है। इस आयोजन की सार्थकता आप सबके ऊपर ही है क्योंकि आपके लिए है और आप सबका है। इस बात को ध्यान में रखकर अपना पावन दायित्व समझ कर स्वयं यजमान बनें और अन्य सज्जनों को प्रेरित कर पुण्य लाभ कमायें। कार्यक्रम प्रतिदिन दो सत्रों में चलेगा प्रातः 9 बजे से 11 30 तक और दोपहर बाद 2 बजे से 5 बजे तक। आप किसी भी दिन किसी भी सत्र में यजमान बन सकते हैं। यजमान बनने के इच्छुक अपनी तिथि पहले ही लिखवा दें तो उत्तम रहेगा। यज्ञ में निरन्तर रहने वालों के लिए आवासीय व्यवस्था आश्रम में ही रहेगी। **सम्पर्क सूत्र– 9456811519**

– निवेदक –

डॉ0 सत्यप्रकाश अग्रवाल	**बृजभूषण अग्रवाल**	**आचार्य स्वदेश**
(अध्यक्ष)	(मंत्री)	(अधिष्ठाता)

विशेष– गुरूकुल में आने के लिए मथुरा आकर वृन्दावन जाने वाले वाहनों से मसानी चौराहे पर उतरें, पूर्व की ओर जाने वाले मार्ग पर मात्र 200 कदम पर वेदमन्दिर है।

www.thearyasamaj.org

जो संचय करके दान नहीं करते हैं।
वे दस्यु लूट– लूट घर भरते हैं।

ऐसे लोगों का एकमात्र समाधान वही है जो हमारे प्रधानमंत्री जी ने किया है हम अपने राष्ट्र के नागरिकों से अपील करते हैं कि मोदी जी का साथ सर्व कल्याण की भावना से दें इस कार्य में निश्चित रूप से कुछ परेशानी तो हो रही है और होगी भी पर विश्वास रखिये आप सब लोगों के इस कष्ट को सहने का फल सदा सुन्दर ही होगा। और जिन लोगों का कालाधन जा रहा है वे भी इस कठोर कदम को हृदय से स्वीकार कर अपने पापों का प्रायश्चित राष्ट्र की व्यवस्था में सहयोग देकर करें। उन्हें भी ध्यान रहना चाहिए कि राष्ट्र हमारे लिए भवसागर में नौका के समान है इसी के सहारे हम अपनी जीवन नैया पार लगाते हैं। यदि राष्ट्र ही न रहा तो न तुम बचोगे और न तुम्हारा कालाधन। किसी ने ठीक ही लिखा है कि–

डूबेगी नैया तो डूबेंगे सारे।
न तुम ही बचोगे न साथी तुम्हारे।।

इन सब बातों को सोचकर इस श्वेतक्रान्ति के आन्दोलन में प्रत्येक देशभक्त व्यक्ति को साथ देना चाहिए यही एकमात्र राष्ट्र को सुदृढ़ और स्थायित्व प्रदान करने का कार्य है। ध्यान रहे जिस काले धन से आप अपना परिवार, बच्चों का भविष्य उज्ज्वल करना चाहते हैं वह कभी सम्भव नहीं। कभी डीजल पीने से प्यास नहीं बुझेगी। बालू खाने से बूरे का स्वाद नहीं आयेगा। मिटटी की रोटी जीवन प्रदान नहीं करेगी। इसी प्रकार कालाधन कभी भी सन्मार्ग का पथ प्रदर्शक नहीं होता है। अन्धकार काला होता है उसमें सब वस्तुयें होते हुए भी दिखाई नहीं देती है। इसी प्रकार कालाधन भी हमें अन्धा बना देता है और कोई वस्तु हमें अपने यथार्थस्वरूप में दिखाई नहीं देती हैं। जिसके कारण हम भ्रमित हो जाते हैं। विवेकहीनता के कारण हम पतन के गहरे गर्त्त में चले जाते हैं उस दु:ख रूप पतन से बचने का एकमात्र उपाय है कि हम अपना अपने बच्चों का पालन केवल अपनी परिश्रम की कमाई से करें। जो याज्ञवल्क्य ऋषि की परिभाषा में श्वेत अर्थात् दुग्ध रूप होगी जो आपको आपके परिवार को परिपुष्ट करेगी। अन्यथा सर्वनाश ही समझें। एक बार एक काली कमाई करने वाला थानेदार हमने देखा कि एक बेचारे सीधे–साधे व्यक्ति को धमकाकर पैसे ले रहा था न देने पर उसे झूठे केस में फंसाने की धमकी दे रहा था उस समय हमने कुछ पंक्तियां लिखी थीं। पाठकों की सेवा में शिक्षा के लिए प्रस्तुत है–

काली कमाई वालों को चेतावनी

बड़ा कड़ा कानून प्रभु का अभियोग समेटे जाते हैं।
लपेट रहे निर्दोषों को वे स्वयं लपेटे जाते हैं।
अन्यायी व धनवानों के संग बलवान चपेटे जाते हैं।
जो मेंट रहे सारे जग को जड़ से वे मेटें जाते हैं।
यह चार दिनों की चकाचौंध फिर सुन लो घोर अंधेरा है।
यह तन भी साथ नहीं देगा जिसको तू कहता है मेरा है।
जो जी में हो कर ले प्यारे तू नरसत्ता का चेरा है।
अन्धेर मचाया तूने है अब तेरे लिए अंधेरा है।
रुपया के चक्कर में आकर तूने सब काम बिगाड़ा है।
अपने यह महल बनाने का दीनों का वास उजाड़ा है।
उसके श्रम पर डाका डाला कर दिया दीन बिल्कुल नंगा।
अन्दर का सारा खून पिया कर दिया कलेवर बेढंगा।
फिर गला न्याय का घोट दिया अन्यायी से धन ले डाला।
उस धन से अपना कोष भरा जो धन था बिल्कुल ही काला।
काले में काल छिपा तेरा जीवन को करता काला।
काल में निपट अंधेरा सब ओर दिखे काला काला।
कालेधन से जिनको पाला वह भाई हो या हो साला।
कोई भी साथ नहीं देगा जब होगा तेरा मुँह काला।
कालेधन में मत हो अन्धा अन्धे को दीखेगा काला।
तू पग–पग ठोकर खायेगा फिर कौन बचाने है वाला।
काले से जिनको पाला है उनका जीवन होगा काला।
दीपक काजल का खाता है पैदा करता कागज काला।
इसलिए बात मेरी मानो मत काले पर अनुराग करो।
हो स्वदेश का भला बन्धु तुम काले धन का त्याग करो।

❀❀❀

www.thearyasamaj.org

'तपोभूमि' दिसम्बर 2016 R.N.I. No. 2321/57 रजि. सं. MTR नं. 04/2016-18

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण (सजिल्द)	220.00	भ्रांति दर्शन	20.00
शुद्ध रामायण (अजिल्द)	170.00	दयानन्द और विवेकानन्द	15.00
शंकर सर्वस्व	120.00	इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	12.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00	बाल मनुस्मृति	12.00
नारी सर्वस्व (प्रेस में)		ओंकार उपासना	12.00
शुद्ध कृष्णायण	50.00	शुद्ध सत्यनारायण कथा	10.00
शुद्ध हनुमच्चरित	60.00	दादी पोती की बातें	10.00
विदुर नीति	40.00	क्या भूत होते हैं	10.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	40.00	आर्यों की दिनचर्या	10.00
चाणक्य नीति	40.00	महाभारत के कृष्ण	8.00
महाभारत के प्रेरक प्रसंग	40.00	ब्रजभूमि और कृष्ण	8.00
वेद प्रभा	30.00	सच्चे गुच्छे	8.00
शान्ति कथा	30.00	मृतक भोज और श्राद्ध तर्पण	8.00
नित्य कर्म विधि	30.00	वृक्षों में जीव है या नहीं	5.00
संगीत रत्नाकर प्रथम भाग	25.00	गायत्री गौरव	5.00
यज्ञमय जीवन	30.00	महर्षि दयानन्द की मान्यतायें	5.00
दो बहिनों की बातें	30.00	सफल व्यक्तित्व	5.00
दो मित्रों की बातें	30.00	सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ	5.00
चार मित्रों की बातें	20.00	मुक्ति प्रदाता त्रिवेणी	5.00
भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	20.00	जीजा साले की बातें	5.00
मील का पत्थर	20.00	भारत और मूर्ति पूजा (प्रेस में)	

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2017 के लिये वार्षिक शुल्क 150/– रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 1500/– भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक–पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में,

....

....

....

....

.... पिन कोड ....

पत्र व्यवहार का पता :–
व्यवस्थापक – कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर– गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग
(आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास,
मथुरा (उ० प्र०) 281003
फोन (0565) 2406431
मोबाइल– 9759804182

Yogendra # 9927136600

स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए रमेश प्रिन्टिग प्रेस, पंचवटी, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित